डाक-व्यय की पूर्व अदायगी के बिना डाक द्वारा भेजे जाने के लिए अनुमत. अनुमति-पत्र क्र. रायपुर-सी.जी.

पंजीयन क्रमांक रायपुर डिवीजन

छत्तीसगढ़ राजपत्र

(असाधारण)

प्राधिकार से प्रकाशित

क्रमांक 245] रायपुर, सोमवार, दिनांक 22 अक्टूबर 2001—आश्विन 30, शक 1923

वन एवं संस्कृति विभाग

मंत्रालय, दाऊ कल्याण सिंह भवन, रायपुर

संकल्प

क्रमांक एफ 7-42/2001/व.सं. रायपुर, दिनांक 22 अक्टूबर, 2001

विषय :— छत्तीसगढ़ राज्य की वन नीति-2001

1. भूमिका:

1.1 भारत शासन के संकल्प क्रमांक 3-1/1986/एफ.पी. दिनांक 7 दिसम्बर 1988 द्वारा तैयार की गई राष्ट्रीय वन नीति राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में वन प्रबंधन की समस्याओं और उनके समाधान हेतु आवश्यक कार्यवाही पर प्रकाश डालती है.

1.2 नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य की स्थापना 1 नवंबर 2000 को हुई है. राज्य में वनों के भावी विकास हेतु एक ऐसी नवीन रणनीति तैयार करने की आवश्यकता है, जिसमें राज्य की विशेष आकांक्षाओं एवं अपेक्षाओं का प्रतिनिधित्व हो. चूंकि ''वन'' विषय राष्ट्र के संविधान की समवर्ती सूची में शामिल है अतएवं राज्य की वन नीति वर्तमान राष्ट्रीय वन नीति 1988 की मूल अवधारणाओं के अनुरूप होनी चाहिए.

1.3 छत्तीसगढ़ राज्य जिसका विस्तार 17 ^{0}46' से 24 ^{0}6' उत्तर अक्षांश तथा 80^{0} 15' से 84^{0} 51' पूर्वी देशांतर के मध्य हैं, के कुल भौगोलिक क्षेत्र 1,35,224 वर्ग कि.मी. का लगभग 44% क्षेत्र वनों से आच्छादित हैं और इसमें 4 प्रमुख नदी प्रणालियों जैसे महानदी, गोदावरी, नर्मदा और गंगा का जलग्रहण क्षेत्र शामिल हैं. महानदी, इंद्रावती, हसदेव, शिवनाथ, अरपा, ईब राज्य की प्रमुख नदियां हैं. राज्य की जलवायु मुख्यत: सह आर्द्र तथा औसत वार्षिक वर्षा 1200 से 1500 मि.मी. है.

1.4 राज्य में विगत वर्षों में वनों की गुणवत्ता में गंभीर ह्रास परिलक्षित हुआ है. यह स्थिति मुख्यतः वनों के ऊपर अत्यधिक जैविक दबाव तथा जलाऊ लकड़ी, चारा एवं काष्ठ की निरंतर बढ़ती मांग, अप्रभावी वन सुरक्षा तंत्र, आवश्यक क्षतिपूर्ति वृक्षारोपण एवं पर्यावरणीय सुरक्षा उपायों को सुनिश्चित किये बिना वन भूमि का गैर वानिकी उपयोगों के लिये प्रत्यावर्तन तथा वनों को राजस्व प्राप्ति का साधन मानने की प्रवृत्ति के कारण उत्पन्न हुई है.

1.5 राज्य के वनों को दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया गया है, यथा, उष्णकटिबंधीय आर्द्र पर्णपातीय वन एवं उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपातीय वन. राज्य की दो प्रमुख वृक्ष प्रजातियां साल (शोरिया रोबस्टा) तथा सागौन (टेक्टोना ग्रान्डिस) हैं. इसके अतिरिक्त अपर छत्र में बीजा (डिप्टोकार्पस मार्सूपियम), साजा (टर्मिनेलिया टोमेन्टोसा), धावड़ा (ऐनागाईसिस लैटिफोलिया), महुआ (मधुका इंडिका), तेन्दू (डाईयोस्पाईरस मिलैनौजाईलान) प्रजातियां हैं. मध्य छत्र में आंवला (इम्बिलिका ऑफिसिनेलिश), कर्रा (कोलीस्टेन्थस कोलिनस) तथा बांस (डेन्ड्रोकैलामस स्ट्रेक्टिस) आदि महत्वपूर्ण प्रजातियां हैं.

1.6 जैव भौगोलिक दृष्टिकोण से छत्तीसगढ़ राज्य डेकन जैव क्षेत्र में शामिल हैं तथा इसमें मध्य भारत के प्रतिनिधि वन्य प्राणियों जैसे, शेर (पैन्थरा टिगरीस), तेन्दुआ (पैन्थरा पार्ड्स), गौर (बांस गौरस), सांभर (सेरवस यूनिकोलर), चीतल (एक्सेस एक्सेस), नीलगाय (बोसेलाफस ट्रेगोकेमेलस) एवं जंगली सुअर (सस सेक्रोफा) पाये जाते हैं. दुर्लभ वन्य प्राणियों जैसे वन भैंसा (बूबालस बूबालिस) तथा पहाड़ी मैना (ग्रैकुला रिलिजिओसा) इस राज्य की गौरवशाली धरोहर हैं जिन्हें क्रमशः राज्य पशु एवं राज्य पक्षी घोषित किया गया है.

1.7 यह राज्य कोयला, लोहा, बॉक्साईट, चूना, कोरंडम, हीरा, स्वर्ण, टीन इत्यादि खनिज संसाधनों से परिपूर्ण है, जो मुख्यतः वन क्षेत्रों में ही पाये जाते हैं.

1.8 राज्य की जनसंख्या आदिवासी बाहुल्य हैं जो आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूप से वनों पर निर्भर है. इसके अतिरिक्त बड़ी संख्या में गैर आदिवासी, भूमिहीन एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े समुदाय भी वनों पर निर्भर हैं.

2. मूल उद्देश्य :

2.1 राज्य वन नीति को संचालित करने वाले मूल उद्देश्य निम्नानुसार हैं :—

* राज्य के विपुल संसाधन को निरंतरता के आधार पर स्थानीय निवासियों के दीर्घ कल्याण हेतु चिन्हांकित कर उनके उन्मुक्त उपभोग को सामुदायिक नियंत्रण एवं प्राथमिकता के आधार पर संरक्षित एवं प्रबंधित संसाधन के रूप में मान्य करना.

* प्रमुख वनोपज (लकड़ी) से लघु वनोपज, एकल स्तर से बहुस्तरीय वन प्रबंधन तथा प्रतीकात्मक प्रजाति से वन्य प्राणियों के समस्त छोटे बड़े घटकों को समानुपातिक महत्व दिया जाना.

* राज्य के वनों को संरक्षित एवं संवर्धित कर पर्यावरणीय स्थायित्व तथा पारिस्थितिकीय संतुलन स्थापित करना.

* जैविक रूप से सम्पन्न प्राकृतिक वन, जो आदिवासी जन जीवन के प्रमुख सांस्कृतिक आधार है, को सुरक्षित रखकर राज्य के जैव सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित रखना.

* नदियों एवं जलाशयों के जल ग्रहण क्षेत्रों में होने वाले भूक्षरण एवं वन आवरण कमी को नियंत्रित करना ताकि बाढ़ एवं सूखे की स्थिति उत्पन्न न हो. निरंतर गिर रहे भू-जल स्तर को उच्चतम उपयोग स्तर पर लाना और जलाशयों में गाद जमा होने की गति में कमी लाना.

* कम वन क्षेत्र वाले जिलों में वृक्ष रहित अनुत्पादक भूमि पर कृषि वानिकी एवं वृक्ष खेती जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से वन आवरण में वृद्धि करना.

* वनों की धारक क्षमता को ध्यान में रखकर ग्रामीण एवं आदिवासी जनता की जलाऊ एवं छोटी लकड़ी, चारा एवं लघु वनोपज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना.

* वनों को आर्थिक, लाभ का स्रोत न मानकर, राज्य के पर्यावरणीय स्थायित्व एवं पारिस्थितिकीय संतुलन को सर्वोच्च प्राथमिकता देना.

* उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु युक्तियुक्त नीति एवं वैधानिक संरचना सृजित करना.

3. वन प्रबंधन की अनिवार्यताएं :

3.1 विद्यमान वन एवं वन भूमि को पूर्ण संरक्षण प्रदान कर उनकी उत्पादकता में सुधार किया जाना चाहिये. परिष्कृत वैज्ञानिक पद्धतियों से काष्ठ विदोहन एवं वन उपयोग को प्रोत्साहित कर उच्चतम आर्थिक लाभ प्राप्त किया जाना चाहिये.

3.2 राज्य की संपूर्ण जैव संस्कृति विविधता को संरक्षित रखने के लिये राष्ट्रीय उद्यानों, वन्य प्राणी अभ्यारण्यों, जैव संरक्षित क्षेत्रों एवं अन्य संरक्षित क्षेत्रों का सुदृढ़ीकरण कर उनमें समुचित विस्तार किया जाना चाहिये.

3.3 वनों से प्राप्त होने वाली विविध प्रकार के उत्पादों तथा सेवाओं को दृष्टिगत रखते हुए, भौतिक, द्रव्यिक, मानवीय, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय परिसम्पत्तियों और उनके समुचित अधिकारिता सम्पन्न परिवेश को केन्द्र बिन्दु मानते हुए, **लोक संरक्षित क्षेत्र** एक ऐसा क्रियाशील व जनोन्मुखी संरचना की अवधारणा है जिसमें जैव विविधता को अक्षुण्य रख, उसके सतत उपयोग से स्थानीय समुदायों की बुनियादी आवश्यकताओं की परिकल्पना की गई है. अत: वनवासियों की आजीविका सुरक्षा के सुदृढ़ीकरण हेतु, लोक संरक्षित क्षेत्रों का जाल बिछाया जाना चाहिये जिसमें गरीबी उन्मूलन हेतु परिसम्पत्तियों का बैंक बन सके.

3.4 वनों के समीप रहने वाले लोगों हेतु पर्याप्त चारा, जलाऊ तथा छोटी इमारती लकड़ी का प्रावधान आवश्यक है ताकि वनों की सतत धारक क्षमता में होने वाले भावी ह्रास को रोका जा सके. चूंकि ग्रामीण क्षेत्रों में जलाऊ लकड़ी, ऊर्जा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन है इसलिये जलाऊ लकड़ी के उत्पादन बढ़ाने के लिये वनीकरण कार्यक्रम को प्रभावकारी रूप से क्रियान्वित किया जाना चाहिये. इसकी बढ़ती मांग के कारण वनों पर होने वाले दबाव को कम करने के लिये जलाऊ लकड़ी के स्थान पर ऊर्जा के अन्य वैकल्पिक स्रोतों को प्रोत्साहित किया जाए.

3.5 अन्य लघु वनोपज तथा औषधीय पौधे आदिवासियों एवं वनों पर आश्रित अन्य समुदायों के जीवन यापन के महत्वपूर्ण साधन हैं. ऐसे उत्पादों को पूर्ण संरक्षण दिया जाना चाहिये तथा उन्हें परिष्कृत रूप से विनाशविहीन विदोहन द्वारा रोजगारमूलक एवं आय संवर्धन का साधन बनाया जाना चाहिये.

लघु वनोपज वनवासियों की आजीविका के प्रमुख स्रोत हैं. यथां संभव कच्चे माल के रूप में लघु वनोपज को प्रदेश के बाहर न भेजते हुए, स्थानीय स्तर पर ही इनका प्रसंस्करण एवं मूल्यसंवर्धन प्रोत्साहित किया जाए.

3.6 प्राकृतिक वनों पर दबाव कम करने के लिये शहरी क्षेत्रों में वनेत्तर क्षेत्रों से उत्पादित काष्ठ एवं बल्ली प्रदाय किया जाना आवश्यक है. इसलिये राज्य शासन को कृषि वानिकी, वृक्ष खेती को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये.

3.7 समस्त जैव सांस्कृतिक धरोहरों की सुरक्षा तथा बौद्धिक सम्पदा अधिकारों में अवांछित हस्तक्षेप एवं राज्य तथा राज्य के बाहर जैविक चोरी के खतरे से रोकथाम हेतु समुचित नीतियों तथा वैधानिक उपयों का निर्धारण किया जाना चाहिये.

3.8 राज्य के समस्त वन क्षेत्रों का विधिवत् रूप से स्वीकृत कार्य आयोजना के अनुरूप प्रबंधन किया जाना चाहिये.

4. रणनीति :

राज्य के वन प्रबंधन के उद्देश्यों एवं अनिवार्यताओं को निम्नानुसार एक सुपरिभाषित रणनीति द्वारा प्राप्त किया जा सकता है :

4.1 वन भूमि :—

राष्ट्रीय वन नीति का प्रमुख उद्देश्य राष्ट्र के एक तिहाई भाग को वनाच्छादित करना है. यद्यपि छत्तीसगढ़ राज्य इस दृष्टिकोण से विशिष्ट है कि इसका एक तिहाई से अधिक भौगोलिक क्षेत्र वनाच्छादित है, परन्तु यहां ऐसे भी कुछ जिले हैं जहां वनक्षेत्र निर्धारित मानदण्ड से कम है और जहां विद्यमान वन आवरण को संरक्षित रखते हुये उनके विस्तार की आवश्यकता है.

राज्य से उद्गमित एवं प्रवाहित होने वाली नदियों के जलग्रहण क्षेत्रों में पहाड़ों एवं दृश्यावलियों पर वृक्ष आवरण की सुरक्षा अति आवश्यक है.

4.2 राज्य के वनों का प्रबंधन :—

4.2.1 किसी भी वन क्षेत्र को बिना पूर्व स्वीकृत कार्य आयोजना/प्रबंध योजना जो राष्ट्रीय/राज्य वन नीति के आधारभूत सिद्धांतों एवं वानिकी प्रबंध के सतत विकासशील सिद्धांतों पर आधारित हो, कार्य करने हेतु स्वीकृत न दी जाय. वनों पर वन प्रबंधन के प्रभाव का समय-समय पर निर्धारित मापदण्ड एवं सूचकांकों द्वारा अनुश्रवित किया जाय. राज्य को कार्य आयोजना/प्रबंध आयोजना के प्रावधानों के सुनिश्चित क्रियान्वयन हेतु एक अनुश्रवण प्रणाली में विभाग के लिए आवश्यक मार्गदर्शी निर्देश प्रसारित करना चाहिये.

4.2.2 कम वन आवरण वाले जिलों में वैज्ञानिक एवं तकनीकी उपायों द्वारा विद्यमान वनों की उत्पादकता बढ़ाने तथा वन आवरण में समुचित विस्तार की आवश्यकता है ताकि स्थानीय निवासियों की वनोपज संबंधी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित हो सके.

4.2.3 राज्य में किसी भी बाहरी प्रजाति को शासकीय अथवा अशासकीय माध्यम से अपनाया न जाय, जब तक पारिस्थितिकीय, वन, समाजशास्त्र एवं कृषि विशेषज्ञों के दीर्घगामी वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सुस्पष्ट न हो जाये कि उक्त प्रजाति राज्य के लिये उपयोगी

है तथा इसका यहां के स्थानीय वनस्पति, पारिस्थितिकीय एवं जैव सांस्कृतिक परिवेश पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा.

4.2.4 राज्य के वन प्रबंधन का आधार संयुक्त वन प्रबंध होना चाहिये. सभी संयुक्त वन प्रबंधन समितियों जैसे ग्राम वन समिति, वन सुरक्षा समिति एवं इको विकास समिति में भूमिहीन, सीमान्त कृषक एवं महिलाओं की समुचित भागीदारी, निर्णय लेने के सभी स्तरों पर सुनिश्चित करने हेतु विशिष्ट प्रावधान किया जाय.

वनांचल एवं ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत व्यक्तियों के अधिकाधिक क्षमताओं का उपयोग सहभागी वन प्रबंध कार्यक्रम में सुनियोजित रूप से किया जाना चाहिये. राज्य में सहभागी वन प्रबंध कार्यक्रम को सुदृढ़ करने हेतु वनवासियों के वन आधारित आर्थिक कार्यक्रमों में विस्तार किया जाना चाहिए और उन्हें वित्तीय संस्थाओं से प्राप्त होने वाले आर्थिक सहयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए.

4.2.5 राज्य में सतत स्थायी वानिकी विकास, जीविकोपार्जन संरक्षा तथा जैव सांस्कृतिक विविधता के संरक्षण हेतु **लोक संरक्षित क्षेत्रों (पी.पी.ए.)** की स्थापना की जानी चाहिए. स्वीकार्य प्रबंधन के इस मूलभूत परिवर्तन को संरक्षण-विकास रूढ़वादिता के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत संकटसूचक संकेतों, मानवीय संवेदनाओं जैसे सामाजिक सांस्कृतिक मान्यताओं, मानदंडों एवं पद्धतियों जो हमारी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं परम्पराओं के प्रतिसूचक हैं से जोड़कर देखा जाना चाहिये क्योंकि इसमें सफलता के बेहतर अवसर सन्निहित हैं.

4.3 अधिकार एवं सुविधायें :—

राज्य, वनांचलों तथा वन क्षेत्रों के आस-पास रहने वाले लोगों को वनों में प्रवेश तथा उसमें पाये जाने वाले उत्पादों को अपनी निजी उपयोग में लाने के परम्परागत अधिकारों तथा सुविधाओं को मान्यता देता है. इस प्रकार के अधिकार व सुविधाएं जिन्हें निस्तार कहते हैं प्राय: विधि प्रदत्त एवं परम्परागत हैं तथा राज्य के अधिकांश लोगों के जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार हेतु आवश्यक है.

4.3.1 निस्तार जिसमें चराई एवं सूखी जलाऊ लकड़ी का एकत्रीकरण जैसे अधिकार एवं सुविधाएं शामिल हैं सदैव वनों के धारक क्षमता पर आधारित होने चाहिये. इस धारक क्षमता को अधिक पूंजीनिवेश, वन संवर्धन अनुसंधान तथा क्षेत्र के सामाजिक एवं आर्थिक विकास द्वारा अनुकूलतम स्तर पर प्रतिस्थापित किया जाना चाहिये. पालतू बांध कर खिलाने की प्रथा को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, समुदाय की ऐसी आवश्यकताएं जिन्हें विद्यमान प्राकृतिक वनों से पूरा किया जाना संभव न हो, को वनेत्तर क्षेत्रों में सामाजिक वानिकी/कृषि वानिकी/वृक्ष खेती द्वारा पूर्ण किया जाना चाहिए.

4.3.2 वन क्षेत्रों में निवासरत व्यक्तियों जिन्हें परम्परागत अधिकार एवं सुविधायें प्रदत्त हैं, को इस प्रकार प्रेरित किया जाना चाहिए जिससे वे उन वन क्षेत्रों, जहां से वे लाभ प्राप्त कर रहे हैं, को स्वयं संरक्षित एवं विकसित कर सकें. वन संबंधित अधिकार एवं सुविधाएं मुख्यत: प्राकृतिक वनों की सीमा से 5 किलोमीटर की परिधि में रहने वाले समुदायों के निजी उपयोगों के लिये होना चाहिये. यह आशा की जाती है कि संयुक्त वन प्रबंधन कार्यक्रम से जनता को अपने परम्परागत अधिकार एवं सुविधाओं को वनों के धारक क्षमता के अनुरूप सीमित करने की प्रेरणा प्राप्त होगी.

4.3.3 वन एवं वनों के आसपास रहने वाले आदिवासियों एवं अन्य गरीब व्यक्तियों का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन वनों के इर्द-गिर्द केन्द्रित है. इन समुदायों के जलाऊ, चारा, लघु वनोपज एवं इमारती लकड़ी संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति प्राथमिकता के आधार पर, जैव विविधता एवं संरक्षण को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए.

4.4 साल एवं बांस वनों का प्रबंधन :—

साल एवं बांस के वन राज्य के वन पारिस्थितिकी के महत्वपूर्ण घटक हैं. राज्य में साल एवं मिश्रित वनों के मध्य ऐसे वृहद संक्रमिक वन क्षेत्र भी हैं जिन्हें विशिष्ट प्रबंधन पद्धतियों की आवश्यकता है. ऐसे वन क्षेत्र न केवल पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से संवेदनशील एवं आवश्यक हैं अपितु वनों एवं वनों के आसपास निवास करने वाले ग्रामीणों की जीविकोपार्जन संबंधी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी करते हैं. अतः राज्य को इन संक्रमिक साल वनों को विशेष उपचार प्रयास कर तथा बिगड़े बांस वनों को पुनरुद्धार द्वारा तथा अच्छे बांस वनों के समुचित रख-रखाव कर इनके प्रबंधन को प्रभावी बनाकर उत्पादकता बढ़ाने की दिशा में विशेष प्रयास किये जाने चाहिये.

4.5 लघु वनोपजों का संरक्षण :—

राज्य में अकाष्ठीय वनोपज या लघु वनोपज जैसे तेंदूपत्ता, सालबीज, इमली, चिरोंजी, कुल्लू एवं धावड़ा गोंद, कोसा ककून, शहद इत्यादि का संग्रहण आदिवासियों, भूमिहीनों, सीमान्त कृषकों एवं अन्य गरीब समुदायों के जीविकोपार्जन संरक्षा हेतु महत्वपूर्ण घटक हैं. ऐसा भी कहा जा सकता है कि लघु बनोपज गरीब ग्रामवासियों के प्रमुख आधार हैं न कि कथित वृहद काष्ठीय वनोपज. लघु वनोपज जैसे तेंदूपत्ता एवं साल बीज से शासन को काफी राजस्व भी मिलता है जिसे अब संग्राहकों में ही वितरित किया जा रहा है.

4.5.1 राज्य को छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित के माध्यम से राज्य के भीतर लघु वनोपजों का सतत स्थाई उपयोग एवं दीर्घगामी संरक्षण हेतु आवश्यक उपाय सुनिश्चित करना चाहिये.

4.5.2 राज्य शासन को पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों का विस्तार) अधिनियम 1996 के प्रावधानों के अनुसार लघु वनोपज पर स्थानीय समुदायों को मालिकाना हक देने हेतु आवश्यक कार्य करना चाहिये.

4.6 औषधि पौधों का संरक्षण :—

सभ्यता के प्रारंभ से वन बहुमूल्य औषधीय पौधों के स्रोत रहे हैं. राज्य के समृद्ध औषधीय एवं शाकीय पौधों को दृष्टिगत रखते हुये इनके अंतःस्थलीय एवं बाह्य स्थलीय संरक्षण, घरेलूकरण तथा विनाशविहीन विदोहन हेतु स्थानीय व्यक्तियों जैसे परम्परागत ओझा, गुनिया तथा वैद्यों के सक्रिय सहयोग से एक प्रक्रिया विकसित की जानी चाहिये. ग्रामीणों विशेषकर आदिवासियों के सामाजिक, सांस्कृतिक, आंध्यात्मिक एवं औषधीय परम्परा को इनके समुदाय आधारित संरक्षण एवं उपयोग का आधार बनाना चाहिये.

4.7 वन संरक्षण :—

वन एक सर्व सुलभ संसाधन होने के कारण विविध प्रकार के दबावों जैसे चोरी, अग्नि, अवैध चराई तथा अतिक्रमण हेतु अत्यन्त संवदेनशील है. वन संसाधन जैसे काष्ठ एवं वन्य जीव

एवं उनके अंगों की चोरी, दूसरे अपराधों की तुलना में कम जोखिम एवं अधिक लाभ वाले अपराध माने जाते हैं. अनियंत्रित वन अग्नि से जैव विविधता तथा वनों के पुनरुत्पादन में अत्यधिक क्षति होती है साथ ही वन अग्नि उस जैविक पदार्थों तथा सूक्ष्म जीवों को भी नष्ट कर देती है जो वनों की पारिस्थितिकीय विकास के लिये अति आवश्यक हैं. पालतू पशुओं द्वारा वनों में अनियंत्रित चराई वनों के अवमूल्यन, अपघटन तथा पुरुत्पादन में कमी का प्रमुख कारण है. खेती के लिये वन भूमि में अतिक्रमण, वनों के समाप्ति का एक प्रमुख कारण है. अत: वनों की सुरक्षा को अत्यधिक प्रभावी व सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता है.

4.7.1 स्थानीय लोगों को शामिल करते हुए ग्रामीण स्तर पर समितियों का निर्माण कर सुरक्षा तंत्र को अधिक कारगर बनाया जाना चाहिए एवं इन समितियों को अधिक सक्षम बनाने के लिये उन्हें और अधिकार तथा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए.

4.7.2 वन अपराध प्रकरणों एवं अपराधियों को नियंत्रित करने के लिये युक्तियुक्त वैधानिक शक्तियों एवं सांख्यकीय सूचनाओं युक्त "**वन अपराध ब्यूरो**" स्थापित किया जाना चाहिए.

4.7.3 वन अपराध प्रकरणों के त्वरित निपटारे हेतु **जिला स्तरीय विशेष न्यायालय** गठित किया जाना चाहिये.

4.7.4 वनों में चराई नियंत्रण के लिये प्रचलित चराई नियमों को वनों की धारक क्षमता के परिपेक्ष्य में ग्रामीण समुदायों की सक्रिय भागीदारी से प्रभावकारी बनाया जाना चाहिए. वनों में पशु चराई उसकी धारक क्षमता से अधिक नहीं होना चाहिए.

4.7.5 वनों में अग्नि को कड़ाई से नियंत्रित किया जाना चाहिये. परिष्कृत एवं आधुनिक तकनीकों एवं उपकरणों जैसे भौगोलिक सूचना प्रणाली एवं सुदूर संवेदनशील तकनीकी द्वारा वन अग्नि को नियंत्रित किया जाना चाहिये.

4.8 वन भूमि का गैर वानिकी प्रयोजन हेतु हस्तांतरण :—

4.8.1 वन भूमि या वृक्षाच्छादित भूमि को विविध परियोजनाओं और कार्यक्रमों के लिये आसानी से उपलब्ध होने वाली संसाधन न समझकर राष्ट्रीय धरोहर समझा जाना चाहिये. जिसके समुचित सुरक्षा का दायित्व एवं सतत उत्पादों के उपभोग का अधिकार समस्त समुदायों को है. वन भूमि का गैर वानिकी कार्य हेतु हस्तांतरण, विशेषज्ञों द्वारा भूमि के पारिस्थितिकीय, पर्यावरणीय एवं सामाजिक मूल्यों एवं लाभों के परिपेक्ष्य में अत्यधिक सावधानी से परीक्षण किया जाना चाहिये. जिन प्रकरणों में वन भूमि का हस्तांतरण किया जाना हो, उसके परियोजना में न केवल पहले से ही पुनरुत्पादन/क्षतिपूर्ति वृक्षारोपण का अपितु क्षेत्र के सामाजिक अधोसंरचना विकास का भी प्रावधान किया जाना चाहिये.

4.8.2 ऐसे हितग्राहियों को जिन्हें वनभूमि एवं वृक्षादित भूमि में खदान स्थापित करने एवं उत्खनन की अनुमति प्राप्त है उन्हें उपयोग उपरान्त उत्खनन से होने वाले पर्यावरणीय क्षति को रोकने तथा क्षेत्र को हरा भरा करने हेतु केन्द्र शासन के मार्गदर्शी निर्देशों एवं स्थापित वानिकी सिद्धांतों के अनुरूप समग्र प्रयास करना चाहिये. उत्खनित क्षेत्रों में पुनरुद्धार कार्य किया जाना चाहिये ताकि यहां पारिस्थितिकीय संतुलन पुन:स्थापित हो सके.

4.9 जैव-सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण :—

4.9.1 छत्तीसगढ़ राज्य जैव-सांस्कृतिक विविधता से परिपूर्ण है. इस विविधता को निम्न गतिविधियों द्वारा संरक्षित किया जाना चाहिये:—

* राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में जैव-सांस्कृतिक संसाधनों के सर्वेक्षण एवं अभिलेखीकरण में तेजी लाना चाहिए. इस सर्वेक्षण में विशिष्ट प्रजातियों/आबादियों एवं समुदायों में वितरण तथा मानवीय-जैविकता के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण वर्गों की जानकारी शामिल किया जाना चाहिए.

* संरक्षित क्षेत्रों जिसमें बायो स्फेयर रिजर्व, राष्ट्रीय उद्यान, अभ्यारण्य, जीन संरक्षण क्षेत्र और लोक संरक्षित क्षेत्रों आदि की स्थापना करते हुए जैव विविधता का संरक्षण किया जाना चाहिए. ऐसे क्षेत्रों में वे स्थल भी शामिल किये जायेंगे जो वर्गीकरण एवं पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं. साथ ही ऐसे पौधे एवं प्राणियों को भी समुचित महत्व दिया जाये जो वर्गीकरण के अंतर्गत मेरूदंडधारी एवं अमेरूदंडधारी प्राणी तथा सूक्ष्म पौधे हैं जो कि स्वस्थ्य पारिस्थितिकीय तंत्र का संतुलन बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं. राष्ट्रीय उद्यानों/बायोस्फेयर/जीन संरक्षण केन्द्रों को स्थापित करने में यदि आदिवासियों को विस्थापित किया जाता है तो उन्हें उचित स्थल ऐसी जगह पर बसाया जावे जिससे बसाहट उपरांत उनके जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार परिलक्षित हो.

* राज्य की जैव-सांस्कृतिक विविधता के संरक्षण के लिये विधिक तथा प्रशासकीय प्रावधानों का भी समावेश किया जावे ताकि जैव चोरी पर प्रभावी नियंत्रण के लिये पौधों तथा वन्य प्राणी अनुवांशिक साधनों का सतत व समुचित उपयोग राज्य व राष्ट्र हित में किया जा सके. राज्य के नागरिकों विशेषकर आदिवासियों के बौद्धिक सम्पदा अधिकार का सद्‌भावना से संरक्षण किया जाना चाहिए. पौधों तथा वन्य प्राणियों की प्रजाति का संरक्षण कर राज्य को समृद्धशाली, अनुवांशिक विविधता के एक अभिन्न अंग के रूप में विकसित व संरक्षित किया जाना चाहिए.

* राष्ट्रीय उद्यानों, अभ्यारण्यों, वन क्षेत्रों तथा अन्य संरक्षित क्षेत्रों के मध्य ऐसे महत्वपूर्ण गलियारों की पहचान एवं घोषणा किया जाना चाहिए जो पौधों एवं वन्य प्राणियों के आनुवांशिक निरंतरता बनाये रखने के लिये आवश्यक है. ऐसे क्षेत्रों का प्रबंधन वन प्राणियों की आवश्यकताओं जैसे स्नैग, प्राकृतिक रिक्त स्थल, घास, क्षेत्र, विशिष्ट शैल आवासों, गुफाओं, कन्दराओं एवं जल स्रोतों के संरक्षण द्वारा किया जाना चाहिये.

* विलुप्तता के कगार पर खड़े पौधों तथा वन्य प्राणियों के बाह्य स्थली संरक्षण हेतु आधुनिक तकनीकों जैसे टिशु कल्चर एवं जैव तकनीको से संरक्षित किया जाना चाहिए.

* एकल प्रजाति रोपण तथा विदेशी प्रजातियों के रोपण यथा संभव न किया जायें जब तक कि उनकी स्थल पर उपयोगिता वैज्ञानिक अनुसंधान के आधारों एवं प्रयोगों से स्थापित न कर दी गई हो. राज्य के वनों में विदेशी वन्य प्राणियों की प्रजातियों को प्रवेश नहीं दिया जाना चाहिए.

* राज्य के आदिवासी तथा अन्य मूल निवासी जो वनों तथा वनों के समीप रह रहे हैं उनके समृद्ध सांस्कृतिक विरासत व रीति रिवाजों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि वे अपने विशिष्ट परस्परव्यापी संबंधों द्वारा स्वयं एवं वनों को लाभ पहुंचा सकें. संरक्षित क्षेत्रों में विद्यमान भौगोलिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्यों का प्रबंधन जैव सांस्कृतिक संरक्षण के परिपेक्ष्य में किया जाना चाहिए.

4.9.2 राज्य के समृद्ध जैव विविधता संरक्षण हेतु आवश्यक पहलुओं का वन प्रबंधन में विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए तथा वन प्रबंधन योजनाओं में इसके लिये आवश्यक प्रावधान रखा जाना चाहिए. राज्य के प्रत्येक संरक्षित क्षेत्र हेतु वन्य प्राणी प्रबंधन योजना तैयार किया जाना चाहिए. संरक्षित क्षेत्रों में पारिस्थितिकीय विकास एवं स्थानीय जन सहयोग के माध्यम से जैविक दबाव का प्रबंधन किया जाना चाहिए.

4.10 वनीकरण, सामाजिक वानिकी एवं कृषि वानिकी :—

4.10.1 राज्य के कम वन क्षेत्र वाले जिलों में समयबद्ध, वनीकरण तथा वृक्षारोपण कार्यक्रम चलाया जाना चाहिए जिसमें मुख्यत: काष्ठ, चारे की आपूर्ति पर विशेष ध्यान दिया जाकर स्थानीय लोगों, प्रमुखत: वनों पर आधारित लोगों, विशेष कर भूमिहीन तथा गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों की बढ़ती मांग की पूर्ति हो सके.

4.10.2 राजमार्गों, रेल्वे लाइनों, नदी-नालों, नहरों के किनारे और शासकीय व्यवसायिक, संस्थागत एवं निजी अतिशेष भूमियों पर वृक्षारोपण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए. शहरी/औद्योगिक, उत्खनित क्षेत्रों में हरित पट्टियां स्थापित किया जाना चाहिये. ऐसे कार्यक्रम क्षेत्र के सूक्ष्म जलवायु को संवर्द्धित भी करते हैं.

4.10.3 ऐसी ग्रामीण सामुदायिक भूमि जो कृषि के लिये अनुपयोगी है उसमें वृक्षारोपण व चारागाह विकास कार्यक्रम लिया जाना चाहिए. ऐसे कार्यक्रमों को प्रारंभ करने के लिये तकनीकी तथा वित्तीय सहायता हेतु राज्य शासन/सरकारी उपक्रमों/कृषि विश्वविद्यालयों से सहयोग लिया जाना चाहिये. इससे प्राप्त राजस्व को पंचायत का राजस्व माना जाना चाहिये. अन्य प्रकरणों में ऐसे राजस्व के बड़े अंश को स्थानीय समुदायों में उन्हें एक लाभांश के रूप में वितरित किया जाना चाहिये. व्यक्तिगत लाभों विशेष कर कमजोर वर्ग, भूमिहीन मजूदर, लघु व सीमांत कृषक, अनुसूचित जाति, जनजाति, महिला एवं गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों को लगाये गये वृक्षों पर स्वामित्व का अधिकार समुचित प्रावधानों एवं नियमों को निर्धारित करते हुए दिया जाना चाहिये. हितग्राही यदि इस बात की जिम्मेदारी लेते हैं कि वे वृक्षों की सुरक्षा करेंगे तो स्वयं रोपित वृक्षों में से अपनी आवश्यकतानुसार वनोपज का उपयोग करने के लिये पात्र होंगे.

4.10.4 राज्य की भू-राजस्व संहिता तथा वन में भी समुचित संशोधन किया जाना चाहिये ताकि वृक्षों के विदोहन, अनुज्ञापत्र तथा वाणिज्यिक नियमों को आवश्यकतानुसार सरल बनाया जा सके और व्यक्तियों तथा संस्थानों को निजी वृक्ष खेती एवं वृक्षरोपण हेतु प्रोत्साहित किया जा सके.

4.10.5 शासकीय वनों में वृक्षारोपण करने हेतु कार्य आयोजना/प्रबंध योजना के प्रावधानों का कड़ाई से पालन किया जाना चाहिये.

4.10.6 राज्य में बढ़ते हुये काष्ठ की मांग तथा आपूर्ति के लिये सिंचित तथा उच्च तकनीक वृक्षारोपण को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये. इस दिशा में वन विकास निगम को प्रमुख भूमिका निभाना चाहिये.

4.11 जैविक पदार्थ का उत्पादन :—

राज्य की अधिकांश जनता को जलाऊ, काष्ठ, बांस, चारा तथा रेशों की आवश्यकता सर्वप्रथम हैं. इस संदर्भ में उत्पादन बढ़ाने तथा ग्रामीण जनता के सतत स्थाई संसाधन उपयोग संबंधी आवश्यकताओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिये.

4.11.1 कार्य आयोजना/प्रबंधन योजना के प्रावधान जैव पदार्थों जैसे काष्ठ के उत्पादन को प्रोत्साहित करना चाहिये. काष्ठ के सुसंगत उपयोगों हेतु आवश्यक कार्यवाही किया जाना चाहिये ताकि इस संसाधन का अधिकाधिक उपयोग हो सके.

4.11.2 घरेलू ऊर्जा में वैकल्पिक साधनों के प्रोत्साहन हेतु प्राथमिकता के आधार पर कार्यवाही किया जाना चाहिये ताकि वनों पर जलाऊ लकड़ी प्रदाय हेतु दबाव कम हो सके.

4.12 वनों पर आधारित उद्योग :—

राष्ट्रीय नीति 1988 के तारतम्य में वनों पर आधारित उद्योगों को इस बात के लिये प्रोत्साहित करना है कि वे अपने उपयोग के लिये कच्चे माल की आपूर्ति निजी वानिकी के माध्यम से करें तथा वैकल्पिक कच्चे माल का प्रयोग करें.

4.12.1 क्षेत्र के पारिस्थितिकीय, सांस्कृतिक और सामाजिक प्रभावों का भली-भांति अध्ययन किये बिना कुटीर एवं ग्रामीण स्तर के उद्योगों को छोड़कर भविष्य में किसी भी वन आधारित उद्योगों को अनुमति नहीं दिया जाना चाहिये. स्थानीय जनता के ईंधन, चारे और इमारती लकड़ी की आवश्यकताओं को वनाधारित उद्योगों के लिए उत्सर्ग नहीं किया जाना चाहिये.

4.12.2 वन आधारित उद्योगों तथा कृषकों के बींच सीधे संबंधों को प्रोत्साहन देना चाहिये ताकि कृषक उद्योगों में लगने वाले कच्चे माल का उत्पादन कर सकें. उद्योग-कृषक के बीच आपसी तालमेल का परिणाम प्रमुख कृषि भूमियों के प्रति स्थापन तथा छोटे तथा सीमान्त कृषकों के विस्थापन के रूप में नहीं होना चाहिये.

4.12.3 उद्योगों को राज्य के जैविक पदार्थीय संसाधनों के व्यापार में किसी प्रकार का अनुदान नहीं देना चाहिये ताकि वे यथा संभव विकल्प के रूप में गैर वानिकी कच्चे माल के उपयोग हेतु प्रेरित हो सकें.

4.12.4 उद्योगों के लिये भूमि का आवंटन भूमि परिसीमन और राज्य के अन्य भू-नियमों के अन्तर्गत किया जाना चाहिये. इन उद्योगों को किसी प्रकार से राज्य में रह रहे आदिवासियों और अन्य समुदायों को सामाजिक, सांस्कृतिक परम्पराओं पर विपरीत प्रभाव डालने की छूट नहीं देना चाहिये.

4.12.5 ऐसी उपयुक्त औद्योगिक तथा तकनीकी प्रणाली विकसित किया जाना चाहिये जो ग्रामीण शिल्पकारों/कारीगरों को जैव पदार्थों पर आधारित कुटीर उद्योगों को चलाने योग्य बना सके.

4.13 आदिवासी जन समुदाय तथा वन :—

वनवासियों तथा वनों के प्रगाढ़ परस्पर सहजीवी संबंधों को ध्यान में रखते हुए ऐसी समस्त एजेंसियों को, जो वनों के प्रबंधन के लिये जिम्मेदार हैं जिनमें वन विभाग, वन विकास निगम और लघु वनोपज संघ भी शामिल हैं, आदिवासियों को वनों के संरक्षण, पुनरूत्पादन और विकास में सहभागी बनाना चाहिये.

* लघु वनोपजों का स्थानीय लोगों विशेषकर आदिवासियों के सहयोजन के साथ संरक्षण, पुनरूत्पादन तथा बिना किसी क्षति के उनकी फसल लेना तथा ऐसी वनोपजों के लिये विपणन की व्यवस्था करना.
* वन ग्रामों को राजस्व ग्रामों में परिवर्तित करना.
* आदिवासी हितग्राहियों के आर्थिक स्तर के सुधार के लिये सामुदायिक आधार पर योजनायें चलाना.
* एकीकृत क्षेत्र विकास कार्यक्रमों को मात्र इसलिये नहीं लेना कि वनांचलों तथा उसके आस-पास रहने वाले आदिवासियों की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके, अपितु उनसे विद्यमान वनों पर से दबाब भी कम हो सके.

4.14 वन विस्तार :—

स्वेच्छा से ग्रामीणों द्वारा प्रदाय समर्थन और सहयोग के बिना वन संरक्षण का कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता. अतः यह आवश्यक है कि ग्रामवासियों के मन में वन, उनके विकास और संरक्षण के प्रति प्रत्यक्ष रूप से रुचि उत्पन्न की जावे तथा सामान्य रूप से उनमें वृक्षों, वन्य जीवों तथा प्रकृति के महत्व के प्रति चेतना जगाई जावे. यह लक्ष्य प्राथमिक स्तर से लेकर शैक्षणिक संस्थाओं के सहयोग से हासिल किया जा सकता है. किसानों और इच्छुक लोगों को अपनी भूमि और जल संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग सुनिश्चित करने के लिये कृषि वन वर्धनिक तकनीक सीखने एवं अंगीकार करने हेतु कृषि संस्थाओं के माध्यम से अवसर प्रदान किया जाना चाहिए. इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु विश्वविद्यालयों एवं शासकीय विभागों के पास उपलब्ध जन संचार माध्यम, श्रव्य व दृश्य उपकरणों और विस्तार मशीनरी की सहायता से तैयार अच्छे कार्यक्रमों को प्रचारित करना आवश्यक है.

4.14.1 प्रकृति पर्यटन को प्रोत्साहन :

प्रकृति पर्यटन या पारिस्थितिकीय पर्यटन, जो वनों के रमणीक स्थलों तथा संरक्षित क्षेत्रों में वन्य प्राणियों के दर्शन संबंधी अवसर प्रदाय करता है, को वानिकी विस्तार का एक अंग मानना चाहिये. पारिस्थितिकीय पर्यटन की इन गतिविधियों को ग्रामीण समुदायों के आर्थिक विकास प्रणाली के रूप में भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिये.

4.15 **वानिकी शिक्षा :—**

वानिकी को एक वैज्ञानिक विधा एवं व्यवसाय के रूप में मान्यता दी जानी चाहिये. राज्य के मानव संसाधन आवश्यकताओं को देखते हुए वानिकी शिक्षा हेतु समर्पित विश्वविद्यालयों एवं अन्य संस्थानों में स्नातकोत्तर अनुसंधान, शिक्षा एवं उत्कृष्ट व्यवसायिक कौशल के सृजन को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये. राज्य वन सेवा में चयन के दौरान अधिकारियों के शैक्षणिक एवं व्यवसायिक योग्यता को दृष्टिगत किया जाना चाहिये.

4.16 **वानिकी अनुसंधान :—**

पर्यावरण स्थायित्व, ऊर्जा के स्रोत, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर प्रदान करने हेतु वनों का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है. वानिकी अनुसंधान पर विशिष्ट ध्यान दिया जाना चाहिये जिससे अनुसंधान के आधार को सुदृढ़ कर नवीन प्राथमिकताओं का चयन किया जा सके. राज्य को चाहिये कि वह पारदर्शिता एवं प्रतियोगी भावना के आधार पर अनुसंधान संस्थानों जैसे भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद् द्वारा किये जा रहे अनुसंधान कार्यों को आर्थिक सहयोग से प्रोत्साहित कर एवं उनमें समन्वय स्थापित करें. राज्य में अनुसंधान एवं विकास हेतु आवश्यक प्राथमिकता वाले कुछ क्षेत्र इस प्रकार हैं :—

* एकीकृत पारिस्थितिकीय प्रणाली को दृष्टिगत रखते हुए बहुस्तरीय नवीन वन वर्धनिक प्रणालियों का विकास.
* आधुनिक वैज्ञानिक, वन वर्धनिक और तकनीकी विधियों का उपयोग करते हुए गैर काष्ठीय वनोत्पादनों के उत्पादन में प्रति इकाई क्षेत्र, प्रति इकाई समय में वृद्धि करना.
* पड़त/सीमान्त/अनुपयोगी/खदानी क्षेत्रों तथा जलग्रहण क्षेत्रों को वनस्पतियों से पुनः आच्छादित करना.
* विद्यमान प्राकृतिक वन संसाधनों का प्रभावकारी संरक्षण एवं प्रबंधन.
* सामाजिक वानिकी, कृषि वानिकी एवं प्रक्षेत्र वानिकी.
* विभाग एवं निजी व्यक्तियों द्वारा सभी जिलों में आधुनिक रोपणियों की स्थापना.
* संयुक्त वन प्रबंधन वनवर्धन, वन संसाधनों का समुचित उपयोग, महिलाओं तथा आदिवासियों का सशक्तीकरण, गरीबी उन्मूलन में वानिकी की भूमिका, सामाजिक और जीविकोपार्जन का विश्लेषण, वन नीति, औषधीय पौधों की खेती एवं विपणन, विलुप्तता के कगार पर खड़े तथा विलुप्तता के भय से ग्रस्त वनस्पतियों एवं वन्य प्राणियों का सरंक्षण, वन परिदृश्यावली आधारित वन प्रबंधन, वनों के जैव सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण इत्यादि.

4.17 **मानव संसाधन प्रबंधन एवं क्षमता निर्माण :—**

वन अधिकारियों की व्यवसायिक क्षमता के स्तर के विकास हेतु शासन को संकल्पित होना चाहिये. जिससे उच्च शिक्षित तथा उत्साहित कर्मी आकर्षित हो सके तथा सुदूर एवं विपरीत परिस्थितियों में कार्य करने वाले व्यक्तियों के सेवा प्रकृति में अनुकूल वातावरण तैयार हो सके.

4.17.1 शासन को चाहिये कि वन विभाग में सभी स्तरों पर सतत रूप से अच्छे प्रशिक्षित व दक्ष कर्मचारियों/अधिकारियों की उपलब्धता को सुनिश्चित करे.

4.17.2 वन कर्मचारियों/अधिकारियों के लिये विशेषज्ञता तथा दक्षता हेतु प्रशिक्षण की भी व्यवस्था होना चाहिये ताकि वे अपनी व्यक्तिगत योग्यता एवं दक्षता को बनाये रखें जिससे वे राज्य में वनों के विकास हेतु नई तकनीकों, नये सिद्धान्तों तथा आधुनिक अवधारणाओं से स्वयं को अवगत करा सकें. मानव संसाधन विकास की रणनीति में स्थानीय लोगों विशेषकर ग्राम वन समितियों, वन सुरक्षा समितियों तथा इको विकास समितियों की क्षमता विकास को सुनिश्चित किया जाना चाहिये.

4.18 वानिकी में सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग :—

4.18.1 व्यापक वानिकी डाटा बेस का विकास :

राज्य में वानिकी के व्यापक डाटा बेस के विकास तथा उसमें निरंतर परिमार्जन की महत्ता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है. इसके लिये आवश्यक मानव संसाधन एवं कम्प्यूटर उपकरणों से सुसज्जित **आधुनिक वानिकी सूचना केन्द्र** का गठन किया जाना चाहिये.

4.18.2 भौगोलिक सूचना प्रणाली (जी.आई.एस.) तथा भू-मंडलीय स्थिति प्रणाली (जी.पी.एस.) का वानिकी प्रबंध में प्रयोग :

वानिकी में भौगोलिक सूचना प्रणाली (जी. आई. एस.) तथा भू-मंडलीय स्थिति प्रणाली (जी. पी. एस.) का बहुत महत्वपूर्ण उपयोग है. आधुनिक तकनीकों को वानिकी योजनाओं के निर्माण, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में उपयोगी बनाने हेतु एक पूर्णतः विकसित **जी.आई.एस. केन्द्र** स्थापित किया जाना चाहिये.

4.18.3 वानिकी में इलेक्ट्रानिक-प्रशासन को प्रोत्साहन :

इलेक्ट्रानिक प्रशासन, जो सूचना तकनीकी का प्रशासकीय कार्यों में उपयोग है, आज जीवन के हर क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बना चुका है. वन प्रशासन में, विशेषकर जन साधारण से संबंधित मामलों में, इलेक्ट्रानिक तकनीक के अधिकाधिक उपयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये.

4.19 विधिक सहायता एवं अधोसंरचना का विकास :—

इस नीति के प्रभावकारी क्रियान्वयन हेतु समुचित विधिक एवं अधोसंरचना संबंधी सहयोग की आवश्यकता है.

4.20 वानिकी के लिये वित्तीय सहायता :—

राज्य वन नीति के उद्देश्यों को आर्थिक संसाधनों में बिना समुचित पूंजी निवेश के प्राप्त नहीं किया जा सकता है. यह राज्य का महती दायित्व है कि वह अपने आर्थिक संसाधनों को वन नीति के क्रियान्वयन हेतु उपलब्ध कराये.

4.21 उपसंहार :—

यह विश्वास है कि आलोच्य वन नीति छत्तीसगढ़ राज्य में पर्यावरणीय स्थिरता, जैव-सांस्कृतिक विविधता संरक्षण को प्रोत्साहित कर वनों में रहने वाले आदिवासी एवं वनों पर आधारित अन्य समुदायों की मूलभूत आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाले वन प्रबंधन कार्यक्रमों का सृजन करेगी.

छत्तीसगढ़ के राज्यपाल के नाम से तथा आदेशानुसार,
राम प्रकाश, विशेष सचिव.

रायपुर, दिनांक 22 अक्टूबर 2001

क्रमांक एफ 7-42/2001/व. सं.—भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 के खंड (3) के अनुसरण में संकल्प "छत्तीसगढ़ राज्य की वन नीति-2001" दिनांक 22 अक्टूबर 2001 का अंग्रेजी अनुवाद राज्यपाल के प्राधिकार से एतद्द्वारा प्रकाशित किया जाता है.

छत्तीसगढ़ के राज्यपाल के नाम से तथा आदेशानुसार,
राम प्रकाश, विशेष सचिव.

RESOLUTION

No. F 7-42/2001/F.C. Raipur, the 22nd October 2001

Subject :—Chhattisgarh State Forest Policy, 2001

1. PREAMBLE :

1.1 The GOI vide resolution No. 3-1/1986/F.P. dated the 7th December 1988, enunciated a National Forest Policy that provided a national perspective on forest management problems and specified actions required for tackling them.

1.2 The new state of Chhattisgarh came into being on 1st November 2000. There is a necessity to review the situation and to evolve for the future, a new strategy of forest conservation, which encompasses the special characteristics of the state as well as provides it a new direction. Since forest is a concurrent subject under the constitution of the country, the state's forest policy has to remain in tune with the current National Forest Policy.

1.3 The State of Chhattisgarh, lying between 17^{0}46' N to 24^{0}6' N latitude and 80^0 15' E, to 84^0 51' E longitude, has about 44 percent of its geographical area (135, 224 sq. km.) under forests and provides catchement to at least four main river systems, i.e., Mahanadi, Godavari, Narmada and Ganges. Major rivers of the state are Mahanadi, Indravati, Hasdeo, Sheonath, arpa and Ibb. The climate of the state is generally sub humid with an annual rainfall ranging from 1200 to 1500 mm.

1.4 Over the years, the forests in the state have suffered serious depletion. This can be attributed to relentless pressures arising from ever-increasing demand for fuelwood, fodder and timber; inadequacy of protection measures; diversion of forest lands to non-forest uses without ensuring compensatory afforestation and essential environmental safe-guards; and the tendency to look upon forests as a revenue earning resource.

1.5 The forests of the state fall under two major forest types, i.e. Tropical Moist deciduous forest and the Tropical Dry deciduous forest, Sal (Shorea robusta) and Teak (Tectona grandis) are the two major tree species in the state. Other notable overwood species are Bija (Pterocarpus marsupium), Saja (Terminalia tomentosa), Dhawra (Anogeissus latifolia), Mahua (Madhuca indica), Tendu (Diospyros melanoxylon) etc., Amla (Embilica officinalis), Karra (Cleistanthus collinus) and bamboo (Dendrocalamus strictus) constitute a significant chunk of middle canopy of the state's forests.

1.6 Biogeographically, the state falls in deccan bio-region comprising representative fauna of central India like the tiger (Panthera tigris), leopard (Panthera pardus), gaur (Bos gaurus), sambhar (Cervus unicolor), chital (Axis axis), nilgai (Boselaphus tragocamelus) and wild boar (Sus scrofa). The state is a proud possessor of rare wildlife like the wild buffalo (Bubalus bubalis) and hill myna (Gracula religiosa) which have been declared as the state animal and bird respectively.

1.7 The State is richly endowed with mineral resources like the coal, iron, bauxite, limestone, corundum, diamond, gold, tin, etc., which fall mainly within the forests of the state.

1.8 The population of the state is predominantly tribal, who have significant economic and cultural dependence on the forests of the state. There is a large population of non tribal landless and economically backward communities in the state who derive livelihood security from the forest of the state.

2. BASIC OBJECTIVES :

2.1 The basic objectives that should govern the State Forest Policy are the following :

- * Unlocking of the vast array of forest resources on sustainable basis enhanced well-being of local people by converting these open access resources (OAR) into community controlled, prioritized, protected and managed resources.

- * A shift in accent from major to minor forest produces, from crown to multi tier forestry and from flagship species to smaller denizens of the forests.

- * Maintenance of environmental stability through preservation and where necessary, restoration of ecological balance that has been adversely disturbed by serious depletion of forests in the State.

* Conserving the Bio-cultural heritage of the state by preserving the biologically rich natural forests that provide the essential cultural milieu to the tribals of the state.

* Checking the denudation of forests and soil erosion in the catchment area of the rivers, and reservoirs for soil and water conservation; mitigating the floods and droughts; recharging of water bodies, aquifers and for the retardation of siltation of the reservoirs.

* Increasig the forest/tree cover in forest deficient districts through afforestation and agro forestry/farm forestry programmes, especially on all denuded, degraded and unproductive lands.

* Meeting the requirements of fuel wood, fodder, minor forest produce and small timber of the rural and tribal population with due regard to the carrying capacity of the forests.

* The derivaion of direct economic benefit from the forests of the State shall be subordinated to the requirements of the environmental stability and maintenance of ecological balance in the state.

* Creating appropriate policy and legal framework for the achievement of these objectives.

3. ESSENTIALS OF FOREST MANAGEMENT:

3.1 Existing forest and forest lands should be fully protected and their productivity increased. It is necessary to promote efficient methods of timber harvest and utilisation to maximize economic returns from the forests.

3.2 The network of national parks, sanctuaries, biosphere reserves and other protected areas should be strengthened and extended adequately for the conservation of total bio-cultural diversity in the state.

3.3 Targeting on broad range of goods and services in terms of physical, material, human, social, cultural and environmental assets in cojunction with appropriate entitlement regime, People's Protected Area (PPA) envisions a proactive and people's friendly framework to ensure long terms protection and maintenance of biological diversity and providing at the same time a sustainable flow of natural products and services to meet local community needs. Therefore, a network of PPAs should be established as poor people's pool of assets for strengthening livelihood security of forest dwellers.

3.4 Provision of sufficient fodder, fuel and small timber to local people, especially in areas adjoining forests, is necessary to prevent further depletion of forests beyond their sustainable capacity. As fuel wood continues to be the predominant source of domestic energy in rural areas, the programme of afforestation should be intensified with special emphasis on augmenting fuel wood production to meet the requirements of the people. Furthermore, to reduce the pressure on forests due to increasing demand for fuelwood, its substitution by alternative sources of energy should be promoted.

3.5 Minor Forest Produce (MFP) including medicinal plants provide sustenance to the tribal population and to other communities residing in and around the forests. Such produce should be protected, improved and their non-destructive harvesting methods enhanced with due regard to providing employment and income generation opportunities to the dependent people.

MFP is the major source of livelihood of tribals and other forest based rural communities. Therefore, rather than exporting MFP in raw form, efforts should be made, as far as possible, to promote processing and value addition of the same, at the local level.

3.6 Supply of timber and poles to urban centres from non-forest sources is necessary to reduce pressure on natural forests. Therefore, state government should encourage agro-forestry, farm forestry and on-farm cultivation of timber trees.

3.7 Establishment of appropriate instruments including policy and legislative measures to protect the rich bio-cultural heritage of the state in view of increasing threats of bio-piracy and infringement of IPR (Intellectual Property Rights) from within and outside the state.

3.8 All forest areas in the state should be managed in accordance with a duly approved management/working plan.

4. STRATEGY :

The objectives and essentials of forest management for the state should be achieved through a well-defined strategy as under :

4.1 Area under forests :—

The national goal is to have a minimum of one-third of the total land area of the country under forest or tree cover. Though the state has the rare distinction of having more than one-third of its geographical area under forest, there are few districts, where the forest area is less than the norm, and where there is a need to expand the forest cover in addition to preserving the existing forest cover.

There is a necessity to preserve the existing tree cover on hill slopes and landscapes providing catchment to rivers originating or flowing through the State.

4.2 Management of state forests :—

4.2.1 No forest should be permitted to be worked without a duly approved working/management plan, which should be in a prescribed format and in keeping with the National Forest Policy/State Forest Policy and the principles of sustainable forest management. The effects of forest management on forests should be periodically measured with the help of set criteria and indicators (C&I). The state should issue necessary guidelines to put in place a monitoring mechanism to ensure regular compliance of management/working plan prescriptions.

4.2.2 In order to meet the growing needs of people for the essential goods and services that the forests provide, it is necessary to enhance the forest cover in forest deficient districts and to increase

the productivity of the existing forests through appropriate scientific and technical inputs.

4.2.3 No exotic species should be introduced, through public or private sources, unless long-term scientific trials undertaken by specialists in ecology, forestry, sociology and agriculture have established that they are suitable and have no adverse impact on indigenous vegetation, ecology and bio-cultural environment of the state.

4.2.4 Joint forest management (JFM) practices should form the basis of forest management in the state. Necessary provisions should be made for the adequate participation at all levels of decision making by the landless, marginal farmers and women in all JFM bodies like the VFC (Village Forest Committee), FPC (Forest Protection Committee) and EDC (Eco Development Committee).

The abundant potential of people living in rural and forest areas should be tapped for sound participatory forest management. Efforts should be made to facilitate assistance from financial institutions to the forest dwellers engaged in forest based economic activity for furthering participatory forest management in the state.

4.2.5 For sustainable forest development, livelihood security and bio-cultural diversity conservation, People's Protected Areas (PPAs) should be established. This paradigm shift of adaptive management can reconcile the dichotomy of threat perception arising out of conservation-development orthodoxy by taking into account the human sensitivities like their socio-cultural norms, beliefs and systems borne out of history, culture and traditions.

4.3 Rights and Concessions :—

Forests of the state recognize traditional rights and concessions of entry into forests and use of the produce there of, by the people living in and around the forest areas. Such rights and concessions, popularly called 'Nistar' have sometimes legal as well as customary basis and the state is obliged to provide for them. In due course of time such rights and concessions with the exception of cultural rights, may no longer be required with an improvement in the standard of living of the majority of people in the state.

4.3.1 The provision of Nistar, should always remain related to the carrying capacity of the forests. The capacity itself should be optimized by increased investment in sylvicultural research and socio-economic development of the area. Stall feeding of cattle should be encouraged. The requirements of the community, which cannot be met from the existing forests, should be met from plantations under social forestry/agro forestry/farm forestry in areas outside the natural forests.

4.3.2 The holders of customary rights and concessions in forest areas should be motivated to identify themselves with the protection and development of forests from which they derive these benefits. The rigths and concessions from forests should primarily be

for the bonafide use of the communities living within a radius of five kilometer from the existing natural forests. It is visualized that the JFM practices will motivate people to keep their customary rights and concessions on forests within the carrying capacity of the forests.

4.3.3 The socio-economic and cultural life of tribals and other communities living within and near forests revolves around the forests. Their domestic requirements of fuel wood, fodder, minor forest produce and construction timber should be the first charge on the forests of the area.The rigths and concessions enjoyed by them should be protected, with due regard to the demands of the conservation of biological diversity in the area.

4.4 Management of Sal and Bamboo Forests :—

Sal and Bamboo forests in the state constitute an important component of the forest ecosystem of the state. The state has large chunks of ecotone forests between Sal and Miscellaneous forests requiring special management practices. Such forests are not only ecologically sensitive, but also provide bamboo and other basic needs that constitute the essential elements of the livelihood security of the poor and tribal people of the state. Therefore, special treatment of ecotone sal forests and the restoration of the degraded bamboo forests as well as the maintenance of good bamboo forests should be the state's priority.

4.5 Conservation of Minor Forest Products (MFP) :—

Non timber forest produce called the Minor forest products or MFP like Tendu leaves, Sal seed, Imli, Chironji, Kullu and Dhawra gum, Kosa cocoon, Honey etc., form an essential element of the means of livelihood of the tribals and the landless, marginal farmers and other rural poor communities of the state. It is often suggested that it is the MFP and not the so called major forest produce like timber that is the mainstay of the rural poor. MFP like the Tendu patta (leaf) and sal seed also add sizeable revenue to the state exchequer, which is now distributed among the gatherers.

4.5.1 The state should take appropriate measures through the Chhattisgarh State MFP (Trade and Development) Co-operative Federation Ltd. for sustainable utilization and long term conservation of all MFP found within the forests of the state.

4.5.2 The State should take necessary steps for endowing the ownership rights of MFP on local communities as per the provisions of the Panchayat Upbandh (anusuchit chetron ka vistaar) Adhiniyam 1996.

4.6 Conservation of Medicinal Plants :—

Forests have been the source of invaluable medicinal plants since the time man realized their preventive and curative properties and started using them for human health cover. In view of the richness of medicinal and herbal plants in the state, a mechanism should be developed for in situ

and ex situ conservetion, domestication and non-destructive harvesting with the active support from local people including traditional healers and vaidyas. The socio-cultural spritual and medicinal arena of the rural populace particularly the tribal should form the backbone of community based conservation and utilisation of medicinal and herbal plants.

4.7 Protection of Forests :—

Forests being an open access resource (OAR) are vulnerable to various kinds of pressures like theft, fire, illegal grazing and encroachment. Theft of forest resources like timber, and animal parts and products is considered as high return and low risk offence. Uncontrolled forest fire result in significant loss of biodiversity, loss of forest regeneration, burning of biomass and destruction of micro organisms necessary for essential forest ecological processes. Unregulated grazing by livestock inside forests is a major cause of forest degradation an decrease in its regeneration. Encroachment on forest lands for agricultural diversion has been a major cause of forest loss. Therefore there is a need to strengthen forest protection measures.

4.7.1 Protection mechanisms should be strengthened by involving local people through village level committees. These committees should be empowered and provided special incentives to prevent the forest offences.

4.7.2 A 'Forest Crime Bureau' with an adequate legal and statistical base should be established for a systematic tackling of crimes and criminals in the forest areas.

4.7.3 Steps should be taken for the establishment of special courts at the district level for quick disposal of forest offence cases.

4.7.4 Grazing regulation in forests should be made more effective through community participation. Grazing by livestock inside the forests should not exceed the carrying capacity of the forest.

4.7.5 Fire in forests should be strictly controlled. Improved and modern techiniques for forest fire prevention and control as well as tools like GIS (Geographical Information System) and remote sensing should be utilized for fire control.

4.8 Diversion of Forest Lands for Non-forest Purposes :—

4.8.1 Forest land or land with tree cover should not be treated merely as a resource readily available to be utilized for various projects and programmes, but as a state asset which requires to be properly safeguarded for providing sustained benefits to the entire community. Diversion of forest land for any non-forest purpose should be subjected to the most careful examination by specialists from the standpoint of ecological, environmental and social costs and benefits. Projects, which involve diversion, should provide in their investment budgets, funds not only for prior regeneration/compensatory afforestation, but also for the development of social infrastructure in the area.

4.8.2 Benificiaries who are allowed mining and quarrying in forest land and in land covered by trees should be required to adopt cluster approach in mining and to repair and re-vegetate the area, after having used it, in accordance with the Government of India guidelines and established forestry practices. Rehabilitation of the mined areas should be done to ensure ecological restoration of the affected site.

4.9 Bio-cultural Diversity Conservation :—

4.9.1 The State is extremely rich in its bio -cultural diversity. This diversity should be preserved through action as under :

* Intensification of surveys and inventorization of bio-cultural resources in different parts of the state. The survey should include information on the distribution pattern of various species/population/communities and the status of ethnobiologically important groups.

* Conservatio of bio-diversity through the establishment of a representative network of protected areas including Biosphere Reserves, National Parks, Sanctuaries, Gene conservation centres, and People's Protected Area. Such areas should cover sites of exceptional taxonomic and ecological value in terms of flora and fauna with adequate emphasis on the lower vertebrate, invertebrate and micro flora, which are important for the maintenance of healthy ecosystems. Tribals and the rural people displaced if any, due to creation of such national parks biosphere reserves/or gene conservation centres should be fully and properly rehabilitated on such sites and in such manner that their standard of living after the rehabilitation is markedly improved.

* Legal and administrative measures should be taken for the protection of state's bio- cultural diversity against bio piracy and for sustainable use of plant and animal genetic resources. Intellectual property rights (IPR) of the people of the state specially the tribals should be zealously guarded. Domesticated species/verieties of plants and animals should be conserved as an integral part of the state's rich genetic diversity.

* Crucial corridors between national parks, sanctuaries, forests and other protected areas should be identified and notified for linking them to maintain genetic continuity of flora and fauna. Such areas should be managed with prescriptions favouring wildlife requirements like the retention of snags, natural gaps, grassy areas, special lithic habitats, caves, cliffs, den sites and water bodies etc.

* Modern techniques of ex situ conservation like 'tissue culture' and biotechnology should be promoted for the

preservation of endangered and threatened species of wild flora and fauna.

* Monoculture and planting of exotic floral species should be avoided unless sufficient experimentation on strict scientific lines has established their usefulness. Exotic faunal species should not be introduced into the forests of the state.

* Tribals and other indigenous people of the state, residing in and around forest areas, with rich cultural traditions and practices, should be encouraged to maintain their unique relationship with the forest for mutual benefit. Unique geographical and cultural landscapes existing in protected areas should be managed keeping in view the conservation of bio-cultural diversity of the state.

4.9.2 Forest management should take special care of the needs of bio-cultural diversity conservation of the state and the forest management/working plans should include specific prescriptions for this purpose. Wild life management plans should be prepared for each protected area of the state. Biotic pressures on protected areas should be managed through eco developmental activities with the active involvement of the local communities.

4.10 Afforestation, Social Forestry & Farm Forestry :—

4.10.1 A need-based and timebound programme of afforestation and tree planting, with particular emphasis on fuelwood and fodder development, in all the forest deficient districts of the state is an urgent necessity to meet the growing needs of the forest dependent sections of the society specially the landless and those identified as BPL (Below Poverty Line).

4.10.2 Planting of trees along side of roads, railway lines, rivers, streams and canals, and on other unutilized lands under the state, corporate, institutional or private ownership should be encouraged. Green belts should be raised in urban/industrial/mined out areas. Such a programme will also help to improve the microclimate of the concerned area.

4.10.3 The village and community lands not requird for other productive uses, should be taken up for the development of tree crops and fodder resources. Technical assistance and other inputs necessary for initiating such programmes should be provided by the State Government, public sector undertakings and the agricultural universities.

The revenue generated through such programmes should belong to the panchayat where the lands are vested in them. In all other cases, such revenue should be shared with the local communities. The vesting, in individuals, particularly from the weaker sections (such as landless labour, small and marginal farmers, scheduled castes, tribals, women and BPL) of ownership rights over trees, should be considered, subject to appropriate

regulations. Beneficiaries should be entitled to usufruct from the trees and in turn be responsible for their safety and maintenance.

4.10.4 The State Land Revenue Code (LRC) and the forest laws should be suitably modified along with the simplification of felling, transit and trading rules, wherever necessary, to facilitate and motivate individuals and institutions to undertake tree-farming and the growing of tree crops on their own land.

4.10.5 The management plan/working prescriptions should be strictly followed for raising plantations inside the government forest areas.

4.10.6 Irrigated and high input plantation of tree crops should be encouraged for meeting the timber demand of the state. The State Forest Development Corporation, FDC should play a pivotal role in this endeavor.

4.11 Production of Biomass. :—

For the vast majority of the people in the state, the foremost need is for fuelwood, timber, fodder and fiber. The issue of enhanced production and sustainable resource utilization should therefore be prioritized in favour of and with due regard to the requirements of the rural people.

4.11.1 The Management/working plan prescriptions should guide the production of biomass including timber from the forests of the state. Necessary steps to promote efficient conversion and utilization of timber should be promoted for the maximization of resource use.

4.11.2 Promotion of alternative sources of domestic energy should be taken up on a priority basis to reduce pressures on forests for the supply of fuelwood.

4.12 Forest based Industries :—

In consonance with the National Forest Policy 1988, forest based industries should be encouraged to produce their own raw material through private forestry and to use alternative raw material.

4.12.1 No forest based enterprise, except that at the village or cottage level, should be allowed in future without a proper ecological, cultural and social impact assessment. The fuel, fodder and timber requirements of the local population should not be sacrificed for raw material supplies to such enterprises.

4.12.2 Direct relationship between forest based industry and farmers should be encouraged to meet the raw material requirements of the industry. This industry-farmer collaboration should in no way be allowed to result in diversion of prime agricultural lands and displacement of small and marginal farmers.

4.12.3 The bio-mass resources of the state should not be subsidized to the industry, which should be encouraged, to the extent possible, to use alternative non-forest raw material.

4.12.4 Allotment of land to the industry should be subject to land ceiling and other land laws of the state. Such industry should not in any way be allowed to adversely affect the socio-cultural traditions of the tribals and other communities living in the state.

4.12.5 Appropriate institutional and technological systems should be developed to enable rural artisans to sustain their bio-mass based crafts and enterprise.

4.13 Tribal People and Forests :—

Having regard to the symbiotic relationship between tribal and forests, a primary task of all agencies responsible for forest management, including the forest department, the Forest Development Corporation and the Minor Forest Produce Federation should be to associate the tribals closely in the protection, regeneration and development of forests as well as to provide gainfull employment to people living in and around the forests on following lines.

* Protection, regeneration and non-destructive harvesting of minor forest produce in collaboration with the local people specially tribals, and provision of institutional arrangements for the marketing of such produce.
* Conversion of forest villages into revenue villages.
* Community based schemes for improving the economic status of the tribals.
* Undertaking integrated area development programmes to meet the needs of the tribal economy and to reduce the pressure on the existing forests.

4.14 Forest Extension :—

Forest conservation programme cannot succeed without the willing support and co-operation of the people. It is essential, to inculcate in the people a direct interest in forests, their development and conservation, and to make them conscious of the value of trees, bio-diversity and nature in general. This can be achieved through the involvement of educational institutions, right from the primary stage.

Farmers and other interested groups should be provided opportunities through different institutions to learn and adopt agrisylvicultural techniques to ensure optimum utilization of their land and water resources. Suitable programs should be propagated through mass media using audio-visual aids and the extension machinery already existing with the universities and the government departments.

4.14.1 Promotion of nature tourism

Nature tourism or eco tourism that utilizes the forest scenic spots as well as the opportunities provided by the protected areas for wildlife viewing should be seen as a forest extension activity. This activity should also be promoted as a revenue generating mechanism that can benefit the rural communities through their active involvement in promotion of eco tourism

4.15 Forestry Education :—

Forestry should be recognised both as a scientific discipline as well as a profession. Universities and institutions dedicated to the development of forestry education should impart academic education and promote post-graduate research and professional excellence, keeping in view the manpower requirements of the state. Academic and professional qualifications in forestry should be kept in view for the recruitment of the State Forest Service personnel.

4.16 Forestry research :—

An increasing recognition of the importance of forests for environmental stability, as a source of enrgy, and as a provider of essential requirements and employment to rural poor, calls for scientific forestry research, by adequate strengthening of the research base as well as by setting new priorities for action. The state should promote, aid and coordinate research projects, to be undertaken by research organizations like the ICFRE (Indian Council of Forestry Research and Education), and universities, in a transparent and competitive manner. Some broad priority areas of research and development needing special attention in the state are :

* Evolving innovative multi tier silvicultrual systems with integrated ecosystem approach.
* Increasing the productivity of non-wood forest produce per unit of area per unit time by the application of modern scientific, silvicultural and technological methods.
* Revegetation of barren/marginal/waste/mined lands and watershed areas.
* Effective conservation and management of existing natural forest resources.
* Social forestry, farm forestry and agro-forestry.
* Establishment of modern nurseries in all districts by the department as well as by private individuals.
* Emerging areas like the joint forest management and appropriate silvicultural practices; efficient utilization of forest resources; women and tribal empowerment; role of forestry in poverty alleviation; social and livelihood analysis of forest dependent communities; forest policy; cultivation and marketing of medicinal

plants; conservation of threatened and endangered species of wild flora and fauna; forest management at landscape level; conservation of bio-cultural values of forests; etc.

4.17 Personnel Management and capacity building :—

Government should aim at enhancing the professional competence status of foresters. It should attract and retain qualified and motivated personnel, and provide conducive working atmosphere, in view of the arduous nature of duties they have to perform, often in remote and inhospitable places.

Capacity building of local people specially the members of VFC (Village Forest Committee), FPC (Forest Protection Committee) and EDC (Eco Development Committee) should form an integral part of the human resource development (HRD) strategy of the state.

4.17.1 The government should ensure sustained availability of trained manpower at every level of the forest department's hierarchy. There should be regular recruitment of forest staff.

4.17.2 Specialized and orientation courses for in-service foresters should be conducted on a regular basis. Management Development programmes incorporating the latest developments in forestry and related disciplines, should be promoted.

4.18 Application of Information Technology into Forestry :—

4.18.1 Development of a comprehensive forest database.

Priority needs to be accorded to developing a comprehensive database regarding the forest resources in the state and to update it on a regular basis. A Forest Information Centre (FIC) should be set up and well provided for in terms of man power as well as computation hardware and software resources.

4.18.2 Use of Geographical Information System (GIS) and Global Positioning System (GPS) in forest management.

Geographical Information System (GIS) and Global Positioning System (GPS) technology has important applications in forestry. A full-fledged GIS centre for rapid adoption of these technologies into the planning, implementation and monitoring of forestry plans and schemes should be established.

4.18.3 Promotion of Electronic Governance in Forestry.

Electronic governance, which is the application of information technology to the process of governance has assumed importance in all walks of life. Forest administration should be encouraged to maximize the use of e-technology in all its operations specially that which pertains to public dealing.

4.19 Legal support and infrastructure Development :—

Appropriate and adequate legislative and infrastructure support would be necessary for an efective implementation of this policy.

4.20 Financial Support for Forestry :—

The objectives of the state policy cannot be achieved without the adequate investment of financial resources on a scale which is appropriate to the need. The state should endeavour to arrange financial resources for the implementation of forestry programmes flowing from this policy document.

4.21 Epilogue :—

It is envisaged that this policy should usher in forest management programmes in Chhattisgarh, that will respect the thresholds of environmental stability, promote conservation of bio-cultural heritage, and fulfil basic requirements of forest based and forest adjacent tribal and analogous communities.

By order and in the name of the Governor of Chhattisgarh,
RAM PRAKASH, Special Secretary.

वन एवं संस्कृति विभाग
मंत्रालय, दाऊ कल्याण सिंह भवन, रायपुर

संकल्प

क्रमांक एफ 3-1/30/2001/व.सं. रायपुर, दिनांक 22 अक्टूबर, 2001

विषय :— सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रोत्साहन एवं प्रवर्धन के लिए छत्तीसगढ़ राज्य की नीति.

1. छत्तीसगढ़ राज्य की कोई औपचारिक शासकीय सांस्कृतिक नीति की घोषणा नहीं की जाएगी,न ही उसे थोपा जाएगा बल्कि यह, स्थानीय समुदायों की अबाध सांस्कृतिक परम्पराओं की पहचान, मान्यता देना, पुनर्जीवित करना, दस्तावेजीकरण, प्रस्तुति एवं उनका प्रचार-प्रसार, होगा.

2. राज्य, शास्त्रीय, लोक, जनजातिय, दृश्य, प्रदर्शनकारी, महानगरीय एवं ग्राम्य कलारूपों के बीच कृत्रिम सीमाएं नहीं बनाएगा, बल्कि इनके अंत:संबंधों और संक्रमणों की पहचान एवं सम्मान करेगा.

3. राज्य, अभिलेखीय एवं गैर अभिलेखीय परंपराओं को प्रोत्साहित करेगा. मूर्त वस्तुओं का संकलन एवं दस्तावेजीकरण तथा अमूर्त परंपराओं का पुनर्संकलन करेगा, इसका मूल स्थानों पर पुनरुद्धार एवं निर्धारित स्थानों पर प्रदर्शन की व्यवस्था करेगा.

4. राज्य, नई संस्थाओं, उत्सवों को प्रस्थापित करने के बजाय अस्तित्वमान सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले उत्सवों एवं संस्थाओं को केन्द्र मानकर, कार्य करने एवं बढ़ावा देने का प्रयास करेगा.

5. राज्य, समुदायों के बीच पारंपरिक संबंधों को बनाए रखने में मदद करने एवं उन्हें विकसित करने में, उनके जीवन, उनकी कलाओं एवं इन कलाओं के रूपों और क्रियाओं के बीच उत्प्रेरक का कार्य करेगा. समुदायों के पर्यावरण केन्द्रित, विकास रणनीति के अनिवार्य तत्व के रूप में, संस्कृति पोषित एवं विभूषित होगी, जिससे संसाधन-प्रबंधन एवं जीवन निर्वाह को गति मिलेगी. संस्कृति, जीवन के सभी हिस्सों का अनिवार्य घटक है इसलिये शासन के समस्त विभागों के आयोजनों में संस्कृति तत्व की पहचान, सन्निवेश और विकास के प्रयास किए जाएंगे. संस्कृति को मात्र नाच एवं गाने के कार्यक्रमों तक सीमित नहीं किया जाएगा, न ही इसे केवल संस्कृति-विभाग का कार्यक्षेत्र माना जाएगा.

6. वृहत विकास परियोजनाओं के निर्माण एवं क्रियान्वयन में एक हिस्से के रूप में सांस्कृतिक प्रभाव का मूल्यांकन संन्निहित किया जावेगा.

7. संस्कृति में सामुदायिक पहचान को बरकरार रखने अंत:संकायी संवाद, संस्थागत समन्वय तथा विकेन्द्रित मैदानी गतिविधियों को प्रोत्साहन दिया जाएगा.

8. छत्तीसगढ़ के अद्वितीय सांस्कृतिक वैविध्य एवं विशिष्ट पहचान को परिभाषित कर, उसके सीमावर्ती पड़ोसी राज्यों तथा सांस्कृतिक प्रदेशों के साथ संबंध व विनिमय स्थापित किया जाएगा. छत्तीसगढ़ की सामुदायिक सांस्कृतिक पहचान तथा भू-परिदृश्य की राष्ट्रीय और वैश्विक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुति की जाएगी.

9. बोलियों के बीच सेतु बनाए जाएंगे. ऐसी बोलियां, जिनकी लिपि नहीं है, की लिपि विकसित की जावेगी. विश्व के दूसरे हिस्सों की देशज जनजातियों एवं समरूप समुदायों से, देश के अन्य प्रदेशों से एवं नवनिर्मित राज्यों के पहाड़ी एवं वन समुदायों के मध्य संबंधों को प्रोत्साहित किया जाएगा.

10. संस्कृति में ज्ञान का संचयन एवं उसके उपयोग को एकाकी रूप में न देखकर साथ-साथ चलने वाली प्रक्रिया के रूप में देखा जाएगा.

11. स्थानीय समुदायों के सह-निर्देशित पहल से सांस्कृतिक कार्यक्रमों का क्रियान्वयन किया जाएगा.

12. राज्य में केवल एक बहुआयामी सांस्कृतिक परिषद् होगी, जिसमें ख्यातिप्राप्त सलाहकारों की एक अंतः संकायी समिति होगी साथ ही विभिन्न कलाओं एवं संकायों से चयनित उच्चस्तरीय विशेषज्ञ इसमें शामिल होंगे. यह केन्द्र समुदायों के विशिष्ट सांस्कृतिक क्रिया-कलापों को अंतः संकायी तत्वों सहित पहाड़ियों, जंगलों, शहरों, कस्बों एवं गांवों में प्रोत्साहित करेगी.

13. केवल स्मारकों को ही संरक्षण प्रदान नहीं किया जाएगा, अपितु महत्वपूर्ण सांस्कृतिक एवं भौगोलिक भू-दृश्यों को भी सुरक्षित किया जाएगा. पुरावशेषों एवं संबद्ध भू-दृश्यों को विश्व धरोहर स्मारक के रूप में विकसित करने का भी प्रयास किया जाएगा.

14. विभिन्न समुदायों के सामुदायिक तथा जैव-सांस्कृतिक इतिहास संबंधी कार्य, समुदायों के जैविक और भौतिक परिवेशीय अंतर्संबंध के संदर्भ में किया जाएगा. अपने मूल स्थान में जीवन को उन्नति देने वाले ज्ञान, दक्षता और तकनीक के तत्वों के विशिष्ट एवं लुप्तप्राय मौखिक एवं अभिलिखित परंपराओं का उद्धार एवं प्रोत्साहन होगा, ऐसी परंपराओं के संधारक विशेषज्ञों (रिसोर्स पर्सन्स) की निर्देशिका बनाई जाएगी. विशेषज्ञों को, अपने समकक्षों को प्रशिक्षित करने, अपने उद्यम को आगे बढ़ाते रहने एवं अपने उत्पादों, सेवाओं के विपणन के लिए सहयोग प्रदान किया जाएगा.

15. पर्यटन को जैविक, पर्यावरणीय एवं सांस्कृतिक अनुरक्षण के अनाक्रामक उपकरण के रूप में विकसित किया जाएगा, केवल व्यावसायिक मनोरंजन के साधन के रूप में नहीं.

16. छत्तीसगढ़ को स्वयमेव जीवंत संग्रहालय मानकर, मूल स्थान तथा निर्धारित स्थानों पर आयोजित प्रदर्शनों की संकल्पना, समस्याओं के मूल्यांकन एवं समाधान को दृष्टिगत रखते हुए की जाएगी, न कि निष्क्रिय प्रादर्शों के रूप में.

17. सांस्कृतिक संसाधन विकास में महिलाओं के भूमिका को विकसित किया जाएगा, बालकों एवं बालिकाओं की यथोचित भागीदारी का प्रावधान होगा, साथ ही शारीरिक तथा मानसिक चुनौतियों से जूझते लोगों के संस्कृति के क्षेत्र में प्रवेश को प्रोत्साहन होगा.

18. सांस्कृतिक गतिविधियों को भूत, वर्तमान एवं भविष्य की पृथकता के बजाय उसके अविभाज्य निरंतरता में देखा जाएगा. समुदायों को उनके सामुदायिक, विशेषकर पर्यावरणीय इतिहास की पृष्ठभूमि पर आधारित जनजातिय इतिहास की रचना हेतु प्रेरित किया जाएगा, ताकि उनके हित एवं समृद्धि के लिए परिकल्पित, राज्य की योजनाओं को आधार मिल सके. परंपरा की प्रासंगिकता और सामयिकता का परीक्षण, आधुनिकता और विकास के संदर्भ में होगा.

19. संस्कृति को उपभोग्य वस्तु अथवा उत्पाद मात्र न मानकर एक जीवंत निरंतर प्रवाह माना जाएगा. सांस्कृतिक शोध-शिक्षण, समीक्षा तथा शोध, उपचार तथा प्रशिक्षण, प्रकाशन तथा समर्थन को प्रोत्साहित किया जाएगा. सांस्कृतिक व्यूह रचना को गरीबी उन्मूलन, सुरक्षित जीवन-यापन, विभिन्न समूहों में समरसता तथा सहअस्तित्व से सम्बद्ध करने वाले सूत्र, नीतियों और कार्यक्रमों के लिए आधारभूमि बनाएंगे.

छत्तीसगढ़ के राज्यपाल के नाम से तथा आदेशानुसार,
राम प्रकाश, विशेष सचिव.

रायपुर, दिनांक 22 अक्टूबर 2001

क्रमांक एफ 3-1/30/2001/व. सं.—भारत के संविधान के अनुच्छेद 348 के खंड (3) के अनुसरण में संकल्प " सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रोत्साहन एवं प्रवर्धन के लिए छत्तीसगढ़ राज्य की नीति" दिनांक 22 अक्टूबर 2001 का अंग्रेजी अनुवाद राज्यपाल के प्राधिकार से एतद्द्वारा प्रकाशित किया जाता है.

छत्तीसगढ़ के राज्यपाल के नाम से तथा आदेशानुसार,
राम प्रकाश, विशेष सचिव.

RESOLUTION

No. F 3-1/30/2001/F.C. Raipur, the 22nd October 2001

Subject :—The Policy of the State of Chhattisgarh for promotion and encouragement of cultural activities.

1. The State of Chhattisgarh will not announce or impose any cultural policy. It will identify, recognize, document, revitalize, present and disseminate the continuing cultural traditions of local communities.

2. The State will not set up artificial boundaries between classical, folk, tribal, visual and performing metropolitan and rural arts. It will recognize and respect the transitions and bridges among these.

3. The State will promote textual as well as non textual traditions, collection and documentation of tangible objects as well as recollection of intangible traditions, their ex situ display as well as in situ revitalization.

4. The State will try to work around existing cultrual landscapes, festivals and institutions, rather than create new ones to replace them.

5. The State will be a catalytic agent, to support and advance the traditional connection among communities, between their life and their arts, and between forms and functions of these arts. It will respect and nourish culture as essential to Eco-specific development strategies of communities, geared to resource management and subsistence. It will recognize culture as an essential ingredient in development. Effort will be made to re-cognize, embed and develop the cultural component in the programmes of all Govt. departments, as culture is a component of all departments of life. Culture will not be reduced to a mere song and dance act, or to an exclusive concern of the Department of Culture.

6. Cultural impact assessment will be embedded as a component in the formulation and implementation of mega developmental projects.

7. The State will further cross disciplinary dialogues, inter institutional networking and decentralized field activity to replenish community identities.

8. The unique identity and polyvalence of the culture of Chhattisgarh will be promoted alongside its relationships and exchanges with cultural provinces and neighborhoods of adjacent states of Chhattisgarh. The community cultural identity and landscape of Chhattisgarh will be presented in the national and global perspective.

9. Bridges will be developed among dialects, and scripts will be developed for unscripted dialects. Relations will be promoted with hill and forest based communi ties from the newly formed states, and from other states of the country, and with indigenous tribal and analogous communities from other parts of the world.

10. Application and accumulation of knowledge will be treated as simultaneous rather than as isolated processes in culture.

11. The cultural programmes will be implemented through co-directed initiatives with local communities.

12. There will be a multi dimensioned cultural council with an interdisciplinary committee of advisers of eminence and it will be manned by people of high calibre, drawn from different arts and disciplines. This centre will promote community specific cultural programmes with corss-disciplinary content, in hills and forests, in urban, suburban and rural areas.

13. Protection will be offered not only to monuments but also to important cultural and physical landscapes, and attempt will be made to promote recognition of relict and associated landscapes as World Heritge sites.

14. Work will be undertaken on the mapping of bio-cultural habitat and socio-economic and intellectual background of the communities, and their relationships with other organic and inorganic communities, peopling the surrounding landscape. Efforts will be made to salvage and encourage unique and vansishing oral and textual traditions of life-enhancing and elements of knowledge, skills and technologies, in their own habitats. A Directory of resource persons, who are repositories of such traditions, will be made. The resource persons will be assisted to train their peers, pursue their avocations, and market their products and services.

15. Tourism will be developed as a non-invasive instrument of biological ecological and cultural conservation, and not as a bread and circus affair.

16. Chhattisgarh it self being treated as a living museum space, the in-situ and ex-situ exhibition and dissemination initiatives, will be designed as exercises in problema-ssesment and resolution, and not as passive displays.

17. Role of women in cultural resource development will be explored; children will be provided with cultural space and elbowroom; and cultural access will be promoted for the physically and mentally challenged.

18. The cultural programme will treat past, present and future as a dynamic continuum and not in isolation. Attempt will be made to get the communities to write their own, community, specially tribal history, in the background of environmental history, to provide a backdrop to the state's efforts to promote community well being and bounty. The relevance and contemporaneity of tradition will be examined in the context of modernity and progress.

19. Culture will neither be treated as a commodity nor as a product, but as a living ongoing process. Encouragement will be given to cultural research and literacy, appreciation and research, therapy and training, publication, counseling and advocacy. The linkages, connecting cultural strategies with poverty alleviation, livelihood security, inter group harmony and coexistence; will form planks for policies and programmes.

By order and in the name of the Governor of Chhattisgarh,
RAM PRAKASH, Special Secretary.

वन एवं संस्कृति विभाग
मंत्रालय, दाऊ कल्याण सिंह भवन, रायपुर

संकल्प

क्रमांक एफ 7-36/2001/व.सं./10 रायपुर, दिनांक 22 अक्टूबर, 2001

विषय :— वनों के संरक्षण एवं विकास हेतु जन-सहयोग प्राप्त करने के लिए संकल्प.

राष्ट्रीय वन नीति, 1988 में यह प्रतिपादित किया गया है कि वनों के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु स्थानीय जनता का सहयोग लिया जाए. तद्नुसार पर्यावरण एवं वन मंत्रालय भारत सरकार ने दिनांक 1 जून, 1990 को सभी राज्यों को निर्देश जारी किया कि वनों में एवं वनों के आसपास रहने वाले आदिवासियों एवं अन्य ग्रामीणों का वन उत्पादों पर प्रथम अधिकार माना जाएगा. इस सिद्धांत के अनुसार संयुक्त वन प्रबंधन प्रणाली के अंतर्गत वनों के प्रबंध में स्थानीय जनता का सहयोग लिया जा रहा है.

2. भारत सरकार द्वारा प्रतिपादित उक्त सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य में राज्य सरकार वन सुरक्षा में जन-सहयोग प्राप्त करने हेतु निम्न संकल्प पारित करता है.

2.1 सघन वनक्षेत्रों में वनखंड सीमा के पांच किलोमीटर दूरी तक स्थित ग्रामों में वन सुरक्षा समितियों का गठन किया जाएगा.

2.2 अनुच्छेद 2.1 में दर्शाये ग्रामों को छोड़कर बिगड़े वनक्षेत्रों में वनखंड सीमा से पांच किलोमीटर दूरी तक स्थित ग्रामों में ग्राम वन समितियों का गठन किया जाएगा.

3. **समितियों के गठन की प्रक्रिया :**

3.1 प्रदेश के ग्रामों में वन विभाग के स्थानीय अमले द्वारा ग्राम की जनता को, संयुक्त वन प्रबंध से परिचित कराने हेतु बैठक आयोजित की जाएगी तथा इसके पश्चात् ग्रामवासी यदि स्वेच्छा से वनों की सुरक्षा, विकास एवं प्रबंध से जुड़ना चाहें तो ऐसी सूचना प्राप्त होने पर वनपाल से अनिम्न स्तर के वनाधिकारी की उपस्थिति में स्थानीय जन प्रतिनिधियों के सहयोग से इस हेतु औपचारिक बैठक आयोजित की जाएगी. वोट देने का अधिकार रखने वाली ग्राम सभा की आबादी के 50 प्रतिशत या अधिक ग्रामीण व्यक्ति यदि बैठक में उपस्थित होकर आम सहमति से समिति के गठन का प्रस्ताव पारित करते हैं, तो ऊपर दर्शाए गए दो जोन में से जिस भी जोन में गांव स्थित है, उस क्षेत्र के लिए निर्धारित समिति का गठन किया जाएगा. यदि ग्राम के साथ सघन एवं बिगड़े दोनों प्रकार के वनक्षेत्र हों तो जिस प्रकार के वनों का बाहुल्य होगा, उसी अनुरूप वन सुरक्षा समिति अथवा ग्राम वन समिति गठित की जाएगी.

3.2 समिति के गठन के उद्देश्य से पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम, 1966 की धारा 4 (ख) के अनुसार ऐसे आवास या आवास समूह अथवा छोटे गांव या उनके समूह जिसमें ऐसे समुदाय समाविष्ट हों, जो परम्पराओं तथा रूढ़ियों के अनुसार अपने कार्यकलापों का प्रबंध करते हों, को ग्राम माना जाएगा, चाहे वह ग्राम अनुसूचित क्षेत्र (संविधान की अनुसूची) में स्थित हो अथवा उसके बाहर. प्रस्ताव पारित होने के उपरांत एक माह के अंदर संबंधित वन मण्डलाधिकारी (क्षेत्रीय) द्वारा कण्डिका-2 के अनुसार समिति को पंजीकृत किया जाएगा. वोट देने का अधिकार रखने वाले हर ग्रामीण इस समिति की आम सभा के सदस्य होंगे. ये सदस्य समिति की प्रथम बैठक, जिसकी अध्यक्षता संबंधित ग्राम पंचायत के सरपंच के सभापतित्व में की जायेगी, में ग्राम

के निवासियों में से अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का चुनाव करेंगे, जिनका कार्यकाल दो वर्ष रहेगा. अध्यक्ष/उपाध्यक्ष में से एक पद पर महिला का होना अनिवार्य होगा.

3.3 यदि ग्राम में पहले से कोई वन समिति विद्यमान हैं तो उसे संयुक्त वन प्रबंध की उक्त समितियों के रूप में मान्यता दी जावेगी.

3.4 गठित समितियों के अध्यक्षों का वनमण्डल स्तर पर संघ बनाया जाएगा.

4. **कार्यकारणी :**

समिति के सदस्यों में (पदेन सदस्यों को छोड़कर) कम-से-कम 11 तथा अधिकतम 21 सदस्यों की कार्यकारिणी का गठन निम्न प्रक्रिया अनुसार किया जाएगा :—

1. संबंधित समिति के निर्वाचित अध्यक्ष की अध्यक्षता में बैठक आयोजित कर समिति कार्यकारिणी को मनोनीत करेगी.

2. वन समिति के अध्यक्ष/उपाध्यक्ष कार्यकारिणी के भी पदेन अध्यक्ष/उपाध्यक्ष रहेंगे.

3. कार्यकारिणी में सभी सदस्यों को मिलाकर अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग के सदस्यों का अनुपात ग्रामसभा में यथा संभव उनकी जनसंख्या के अनुपात में चयन किया जावेगा.

4. कार्यकारिणी में न्यूनतम 33 प्रतिशत महिला सदस्य होंगी जिनमें ग्राम में कार्यरत महिला बचत समूहों, यदि कोई हों तो, की एक-एक प्रतिनिधि का चुनाव किया जाना अनिवार्य होगा.

5. भूमिहीन परिवारों, यदि उपलब्ध है तो, के न्यूनतम दो सदस्य (एक पुरुष एवं एक महिला) होंगे जिनमें ग्राम में कार्यरत स्व सहायता समूह, यदि कोई हों तो, के एक प्रतिनिधि का चुनाव किया जाना अनिवार्य होगा.

6. ग्राम में रहने वाले सभी पंच अथवा सरपंच कार्यकारिणी के पदेन सदस्य होंगे.

7. यदि ग्राम में राजीव गांधी मिशन की जल ग्रहण विकास समिति कार्यरत है तो इस समिति के विभिन्न हितग्राही समूहों में से एक-एक हितग्राही कार्यकारिणी का सदस्य होगा.

8. कार्यकारिणी के शेष सदस्यों हेतु ग्राम में निर्मित ग्राम संसाधनों के उपयोगकर्त्ता समूहों, यदि कोई हो तो, के एक-एक प्रतिनिधि का चुनाव किया जाना अनिवार्य होगा.

9. कार्यकारिणी के उक्त सदस्यों के अतिरिक्त संबंधित वनक्षेत्र का प्रभारी वनरक्षक अथवा वनपाल कार्यकारिणी का पदेन सचिव होगा.

10. पदेन सदस्यों को छोड़कर कार्यकारिणी के अन्य सभी सदस्यों का कार्यकाल दो वर्षों का होगा.

5. **क्षेत्र चयन :**

5.1 समिति के गठन के उपरांत कार्यकारिणी की सलाह से संबंधित वन मण्डलाधिकारी (क्षेत्रीय) द्वारा विभिन्न प्रकार की समितियों हेतु वनक्षेत्र का चयन किया जाएगा. इस हेतु वनक्षेत्रपाल

से अनिम्न स्तर के अधिकारी को उपरोक्त संबंधित वन अधिकारी द्वारा प्राधिकृत किया जा सकेगा. समिति हेतु वनक्षेत्र का चयन करते समय संबंधित ग्राम से उस वनक्षेत्र की दूरी तथा ग्रामीणों द्वारा निस्तार हेतु पारंपरिक रूप से उपयोग में लिए जा रहे वनक्षेत्र का ध्यान रखा जाएगा. उक्त क्षेत्र की तकनीकी दृष्टि से उपयुक्तता पर सहायक वनसंरक्षक स्तर के अधिकारी के अनुशंसा के आधार पर क्षेत्र का चयन किया जाएगा. क्षेत्र चयन में किसी प्रकार के मतभेद की स्थिति में संबंधित वनमण्डलाधिकारी (क्षेत्रीय) का निर्णय अंतिम होगा.

6. सूक्ष्म प्रबंध योजना (Micro Plan) :

6.1 समिति के गठन के पश्चात् यथाशीघ्र वन विभाग की सहभागिता से ग्रामीणों द्वारा सूक्ष्म प्रबंध योजना तैयार की जाएगी. इस योजना में ग्राम का क्षेत्र तथा समितियों हेतु चयनित वनक्षेत्र को भी सम्मिलित किया जाएगा. योजना में वन प्रबंध तथा ग्रामीण संसाधन विकास कार्यक्रम दोनों के संबंध में प्रावधान सम्मिलित होंगे. सूक्ष्म प्रबंध योजना में संसाधनों की संभावित उपलब्धता के अनुसार कार्य सम्मिलित किए जाएंगे. शेष कार्यों को पृथक् परिशिष्ट में प्राथमिकता के अनुसार दर्शाया जाएगा. कार्यों के समक्ष क्रियान्वयन की एजेंसी एवं संसाधन के संभावित स्त्रोत भी दर्शाए जाएंगे. सूक्ष्म प्रबंध योजना को समिति संबंधित जिला स्तरीय वन अधिकारी को अनुमोदन हेतु भेजेगी. सूक्ष्म प्रबंध योजना का विचारोपरांत तकनीकी एवं वैधानिक दृष्टि से परीक्षण के उपरांत अनुमोदन किया जाएगा.

6.2 वनक्षेत्र में वन/वन्यप्राणी प्रबंध हेतु लागू कार्य आयोजना/प्रबंध योजना में प्रबंधन के सिद्धांत निर्धारित किये जाते हैं. समिति हेतु चयनित वनक्षेत्र में किये जाने वाले कार्य उक्त सिद्धांतों के अनुरूप रहेंगे. सूक्ष्म प्रबंध योजना में यह सुनिश्चित किया जाएगा कि वन/वन्यप्राणी प्रबंधन हेतु प्रभावशील अधिनियमों/नियमों का उल्लंघन नहीं हो रहा है.

6.3 उक्त सूक्ष्म प्रबंध योजना के अनुसार वनों में किये जाने वाले कार्यों के लिए आवश्यक धनराशि की व्यवस्था राज्य शासन द्वारा की जाएगी. इसके अतिरिक्त अन्य ऐसे कार्य जो वनों पर ग्रामीणों की निर्भरता कम करते हैं, तथा वन संसाधनों के बेहतर प्रबंध से जुड़े हो, उनके लिए भी राशि की व्यवस्था यथा संभव वन विभाग तथा समिति द्वारा शासकीय राशि, जिला ग्रामीण विकास अभिकरण, अन्य शासकीय विभागों, पंचायतों तथा अन्य स्त्रोतों से की जाएगी. इन कार्यों के क्रियान्वयन में समिति के सदस्यों का श्रम घटक के रूप में 25 प्रतिशत तक यथा संभव योगदान आवश्यक होगा. योगदान के समतुल्य राशि कार्य के मूल प्रावधान से समिति के खाते में जमा की जाएगी, जिससे समिति द्वारा ग्रामीण संसाधन विकास के कार्य कराए जा सकेंगे.

6.4 वन विभाग एवं समिति द्वारा अन्य विकास विभागों के सहयोग से सूक्ष्म प्रबंध योजना तैयार की जायेंगी. ग्राम संसाधन विकास कार्य हेतु जो कार्य सूक्ष्म प्रबंध योजना में सम्मिलित किये जाएंगे उनके क्रियान्वयन हेतु राज्य के अन्य विकास विभागों से तकनीकी एवं वित्तीय संसाधन प्राप्त किये जा सकेंगे.

6.5 आर्थिक विकास के ऐसे कार्य जो पारिस्थितिकीय दृष्टि से उपयुक्त तथा संवहनीय हों, उन्हें सूक्ष्म प्रबंध योजना में प्राथमिकता के आधार पर सम्मिलित किया जाएगा.

6.6 सूक्ष्म प्रबंध योजना के माध्यम से क्रियान्वित होने वाले ग्राम विकास कार्यों में समन्वय के लिए जिला पंचायत की वन स्थाई समिति के अध्यक्ष की अध्यक्षता में राज्य सरकार द्वारा प्रत्येक जिले हेतु एक समन्वय समिति का गठन किया जायेगा. यह समिति प्रत्येक चार माह में कम-से-कम एक बार समन्वय हेतु बैठक आयोजित करेगी, जिसमें जनपद पंचायत के अध्यक्ष एवं सभी

संबंधित विभागों के जिला स्तरीय अधिकारी सदस्य होंगे. वन संरक्षक द्वारा नामांकित एक जिला स्तरीय वनाधिकारी इस समिति के सदस्य सचिव होंगे.

7. **बैठकें :**

अध्यक्ष की अनुमति से पदेन सचिव द्वारा कार्यकारिणी की बैठक बुलाई जाएगी. तीन माह में न्यूनतम एक बैठक बुलाना अनिवार्य होगा. सामान्यत: समिति के अध्यक्ष/उपाध्यक्ष द्वारा बैठक की अध्यक्षता की जाएगी, किन्तु उनकी अनुपस्थिति में सदस्य आम सहमति से किसी अन्य सदस्य को बैठक हेतु अध्यक्ष चुन सकेंगे. आम सभा की बैठक प्रत्येक छः माह में न्यूनतम एक बार बुलाई जाएगी. बैठक का समय व स्थान अध्यक्ष के परामर्श से तय किया जाएगा. बैठक का कार्यवाही विवरण सदस्य सचिव द्वारा इस हेतु संधारित पंजी में रखा जाएगा. कार्यकारिणी की समयावधि समाप्ति वर्ष में आम सभा की अंतिम बैठक में आगामी कार्यकारिणी का चुनाव किया जाएगा. यह बैठक कार्यकारिणी के कार्यकाल समाप्ति के एक माह पूर्व बुलाना होगा.

8. **गणपूर्ति (कोरम) :**

कार्यकारिणी हेतु 50 प्रतिशत सदस्य तथा आम सभा हेतु 30 प्रतिशत सदस्यों की गणपूर्ति आवश्यक होगी.

9. **समिति के अधिकार एवं कर्त्तव्य :**

9.1 **अधिकार :**

जिला स्तरीय वन अधिकारी द्वारा संतुष्ट होने पर कि समिति द्वारा संयुक्त वन प्रबंध का कार्य संतोषप्रद रूप से किया गया है. समिति को निम्नानुसार लाभ प्राप्त हो सकेंगे :—

1. सभी समितियों के परिवारों को प्रतिवर्ष उपलब्धता अनुसार केवल विदोहन व्यय लेते हुए रायल्टी मुक्त निस्तार की पात्रता होगी.

2. सभी वन समितियों को समय-समय पर माइक्रोप्लान/कार्यआयोजना के प्रावधानों के अनुसार किये जाने वाले काष्ठ कूप के विरलन तथा बिगड़े बांस वनों के भिर्रा सफाई से प्राप्त शत-प्रतिशत वनोत्पाद विदोहन व्यय लेते हुए दिया जा सकेगा.

3. वन सुरक्षा समिति को आवंटित वनक्षेत्र में कार्य आयोजना के प्रावधानों के अनुरूप बांस या काष्ठ कूप के अंतिम पातन किये जाने पर पातन से प्राप्त वन उत्पाद की कुल कीमत से कूप में हुए विदोहन व्यय को घटाकर शेष बची राशि की 10 प्रतिशत राशि के मूल्य की वनोपज समिति को प्रदाय की जायेगी. मूल्य की गणना संबंधित वन वृत्त में उस वर्ष हेतु स्वीकृत मालिक मकबूजा काष्ठ/बांस की दरों के आधार पर की जायगी. यदि समिति को आवंटित वनक्षेत्र में अवैध कटाई से हानि होती है तो उस हानि की 50 प्रतिशत राशि के लिए संबंधित वन सुरक्षा समिति को उत्तरदायी माना जाएगा और उस राशि के समतुल्य वनोपज समिति को प्रदाय होने वाली वनोपज से कम कर ली जाएगी.

4. ग्राम वन समिति को आवंटित खुले/बिगड़े वनक्षेत्र में रोपण/बिगड़े वनों के सुधार/चारागाह विकास कार्य किये जाने पर उक्त रोपित क्षेत्र से प्राप्त होने वाले/रोपित क्षेत्र के मुख्य पातन से प्राप्त होने वाले उत्पाद के कुल मूल्य से विदोहन व्यय को घटाने के बाद शेष बची राशि के 30 प्रतिशत राशि के मूल्य की वनोपज समिति को प्रदान की जाएगी. मूल्य की गणना संबंधित वन वृत्त में उस वर्ष हेतु स्वीकृत मालिक मकबूजा काष्ठ/बांस की दरों के आधार पर की जायगी. यदि समिति को आवंटित वनक्षेत्र में अवैध कटाई से हानि होती है तो उस हानि की 50 प्रतिशत राशि के लिए संबंधित ग्राम वन

समिति को उत्तरदायी माना जाएगा और उस राशि के समतुल्य वनोपज समिति को प्रदाय होने वाली वनोपज से कम कर ली जाएगी.

5. लघु वनोपज के संबंध में समितियों के अधिकार पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम, 1996 के प्रावधानों पर छत्तीसगढ़ शासन द्वारा समय-समय लिये गये निर्णयों के अनुसार होंगे.

6. यदि समिति के क्षेत्र के अंतर्गत संज्ञान किये गये वन अपराध में अपराधी को पकड़ने में समिति द्वारा सहयोग किया जाता है तो प्रकरण अभिसंधानित करने या न्यायालय द्वारा निर्णय होने के पश्चात् अपराधी से वसूल की गई मुआवजा/अर्थदण्ड की पचास प्रतिशत राशि समिति के खाते में जमा की जावेगी, जो कि ग्राम विकास पर ही व्यय की जायेगी.

7. यदि समिति के किसी सदस्य द्वारा समिति के कार्यों में असहयोग किया जाता है, या समिति के निर्णयों का पालन नहीं किया जाता है या वन अपराध किया जाता है, तब समिति आम सभा में निर्णय लेकर ऐसे व्यक्ति को निस्तार की पात्रता से वंचित रखते हुए उसकी सदस्यता समाप्त कर सकेगी, किन्तु ऐसा करने के पूर्व संबंधित सदस्य को अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अवसर दिया जावेगा. वन अपराध हेतु की गई कार्यवाही उक्त कार्यवाही के अतिरिक्त होगी.

समिति अपने समस्त अथवा विशिष्ट अधिकारों को आम सभा की बैठक में निर्णय लेकर कार्यकारिणी को प्रत्यायोजित कर सकेगी.

9.2 **कर्त्तव्य :**

1. समिति द्वारा कार्यकारिणी का चयन किया जाएगा.

2. समिति के सदस्यों द्वारा वनों का अग्नि, अवैध चराई, अवैध कटाई, अवैध परिवहन, अवैध उत्खनन, अतिक्रमण व शिकार से बचाव किया जाएगा तथा वन विभाग को इसमें सहयोग किया जाएगा. इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु समिति अपने सदस्यों की सहायता से वनों की सुरक्षा हेतु आवश्यक कदम उठाएगी. समिति के क्षेत्र में पाई गई अवैध कटाई के लिए 50 प्रतिशत हानि का दायित्व समिति का रहेगा.

3. वनों एवं वन्यजीवों को नुकसान पहुंचाने वाले अथवा वनक्षेत्र में अवैध प्रवेश/अवैधानिक गतिविधि करने वाले व्यक्ति अथवा व्यक्तियों की सूचना वन विभाग को दी जाएगी.

4. यदि वन्यप्राणी वनों से भटक कर बाहर आ जाते हैं तो उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करते हुये निकटस्थ वन अधिकारी को सूचना दी जाएगी.

5. समिति द्वारा वन विभाग के साथ मिलकर सूक्ष्म प्रबंध योजना एवं वार्षिक कार्य योजना बनाई जाएगी. योजना में सामुदायिक, हितग्राही मूलक, आवश्यकता पर आधारित एवं क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं के आधार पर कार्यक्रमों का समावेश किया जायेगा. वन एवं वन्यप्राणी संरक्षण से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप

से संबंधित गतिविधियों को प्राथमिकता दी जायेगी. सूक्ष्म प्रबंध योजना वन विभाग की ओर से वन परिक्षेत्र अधिकारी एवं समिति की ओर से कार्यकारिणी के अध्यक्ष के द्वारा हस्ताक्षरित होगी. सूक्ष्म प्रबंध योजना के आधार पर प्रत्येक वित्तीय वर्ष हेतु वार्षिक कार्य आयोजना बनाई जायेगी. वार्षिक कार्य आयोजना के क्रियान्वयन हेतु समिति को एक बार में दस प्रतिशत तक राशि अग्रिम के रूप में प्रदाय की जा सकेगी. स्वीकृत योजनाओं का क्रियान्वयन समिति द्वारा किया जाएगा. यदि कोई समिति कार्यों का संपादन संतोषजनक रूप से नहीं करती है अथवा कार्य करने की इच्छुक नहीं है तो ऐसे प्रकरणों में कार्य विभागीय तौर पर क्रियान्वित किया जायेगा.

6. समिति के सदस्यों को उनके क्षेत्र या अन्य वनक्षेत्र में वन अपराध होने की सूचना होने पर उनके द्वारा तत्काल इसकी सूचना संबंधित बीट गार्ड/गेम गार्ड को दी जाएगी, साथ ही वन अपराधियों को पकड़ने में वनकर्मियों की मदद की जाएगी. पकड़े गये अपराधी तथा वनोपज संबंधित वन अधिकारी को सौंपे जाएंगे.

7. समिति के अध्यक्ष एवं जिला स्तरीय वन अधिकारी अथवा उनके द्वारा प्राधिकृत अधिकारी के मध्य मेमोरेण्डम ऑफ अंडरस्टेंडिंग हस्ताक्षरित किया जाएगा.

8. संकल्प के पैरा 6.3 के अनुसार सूक्ष्म प्रबंध योजना के क्रियान्वयन में समिति के सदस्यों का श्रम घटक के रूप में यथा संभव योगदान सुनिश्चित किया जाएगा.

9. वन अपराध की जांच में समिति के सदस्यों द्वारा वन विभाग के अमले को सहायता दी जाएगी.

10. समिति को विभिन्न स्रोतों से प्राप्त राशि का लेखा-जोखा रखा जाएगा व व्यय का आडिट वनाधिकारी द्वारा निर्धारित एजेंसी से कराया जाएगा.

11. समिति द्वारा सदस्यों की सूची एक पंजी में संधारित की जाएगी. इसके अतिरिक्त अन्य ऐसी पंजी एवं अभिलेख रखे जायेंगे जो वनाधिकारी द्वारा निर्धारित किये जायें.

12. वन सुरक्षा के संदर्भ में वन समिति सदस्यों को उनके क्षेत्र में वन गश्त के दौरान विभिन्न अधिनियमों के अंतर्गत वनकर्मियों की भांति ही लोक सेवक माना जायेगा तथा उन्हें लोक सेवक की भांति शासकीय हित में सद्भावना पूर्वक किये गये कार्यों के लिए वैधानिक संरक्षण उपलब्ध होगा. इसी प्रकार यदि वन अपराध की रोकथाम या संज्ञान के दौरान समिति सदस्य घायल होता है या मारा जाता है तो उसे वनकर्मी के अनुरूप समस्त लाभ प्राप्त होंगे.

13. यदि समिति के क्षेत्र के अंतर्गत संज्ञान किये गये वन अपराध में वन अपराधी को पकड़वाने में समिति द्वारा सहयोग किया जाता है तो प्रकरण अधिसंधानित होने या न्यायालय द्वारा निर्णय होने पर अपराधी से वसूल की गई मुआवजा/अर्थदंड की 50 प्रतिशत राशि समिति के खाते में जमा की जायगी.

10. वनाधिकारी के अधिकार एवं कर्त्तव्य :

जिला स्तरीय वन अधिकारी के अधिकार एवं कर्त्तव्य निम्नानुसार रहेंगे. यदि इस संकल्प में अन्यथा उल्लेख न हो तो वे उक्त अधिकारों को वन क्षेत्रपाल से अनिम्न अधिकारी को प्रत्यायोजित कर सकेंगे.

10.1 अधिकार :

1. समितियों हेतु कंडिका 5.1 के अनुसार क्षेत्रों का निर्धारण.
2. सूक्ष्म प्रबंध योजना का अनुमोदन.
3. समिति का लेखा एवं सदस्यों के मध्य वनोपज एवं अन्य लाभ के वितरण हेतु बनाये गये नियमों का परीक्षण.
4. यदि समिति द्वारा अपने कर्त्तव्यों का निष्पादन पैरा 9.2 के अनुसार नहीं किया जाता है तथा वनाधिकारी द्वारा लिखित चेतावनी के उपरांत भी सुधार नहीं किया जाता है तब वनाधिकारी द्वारा समिति को भंग करते हुये मेमोरेंडम आफ अन्डर-स्टेंडिंग को समाप्त किया जा सकेगा. ऐसी स्थिति में समिति के सदस्यों को पैरा 9.1 में दर्शाये लाभों की पात्रता समाप्त हो जायेगी.

10.2 कर्त्तव्य :

1. कंडिका 3.1 के अनुसार समिति के गठन हेतु ग्राम स्तर पर बैठक का आयोजन.
2. समिति का पंजीयन.
3. समिति एवं कार्यकारिणी के चुनाव का पर्यवेक्षण.
4. समिति के सदस्यों को सूक्ष्म प्रबंध योजना बनाने एवं इसके क्रियान्वयन में प्रशिक्षण देना तथा तकनीकी सहयोग प्रदान करना.
5. कंडिका 6.3 के अनुसार सूक्ष्म प्रबंध योजना में सम्मिलित कार्यों हेतु वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराना एवं कंडिका 6.4 में दर्शाये कार्यों हेतु अन्य विभागों से समन्वय स्थापित करना.
6. समिति को उसके कर्त्तव्यों के निष्पादन एवं अनुश्रवण में सहयोग करना एवं उनके आंतरिक मतभेद समाधान में सहयोग करना.
7. समिति द्वारा किये गये कार्यो का अनुश्रवण एवं मूल्यांकन.
8. समिति के वार्षिक लेखों का परीक्षण करने हेतु एजेंसी का निर्धारण एवं उसके माध्यम से लेखा परीक्षण कराना.

9. कंडिका 9.1 की उप कंडिका 1 से 4 के अनुसार समिति को आवंटित क्षेत्रों से वनोपज एवं अन्य लाभ का प्रदाय.

10. समाज के कमजोर वर्ग, विशेष तौर पर महिलाओं की समिति के निर्णयों एवं लाभांश में समुचित भागीदारी सुनिश्चित करना.

11. **अपील :**

1. कंडिका 9.1 की उप कंडिका 7 में पारित आदेश के विरुद्ध संबंधित व्यक्ति, आदेश की तिथि से एक माह के अंदर क्षेत्रीय अधिकार रखने वाले वन क्षेत्रपाल स्तर के अधिकारी को अपील कर सकेगा.

2. वनाधिकारी द्वारा समिति भंग करने के आदेश के विरुद्ध आदेश की तिथि से एक माह के अंदर कंडिका 3.4 में गठित संघ को अपील की जा सकेगी.

3. उपरोक्त अपीलीय अधिकारियों का निर्णय अंतिम होगा.

छत्तीसगढ़ के राज्यपाल के नाम से तथा आदेशानुसार,
राम प्रकाश, विशेष सचिव.

नियंत्रक, मुद्रण तथा लेखन सामग्री, छत्तीसगढ़ द्वारा शासकीय क्षेत्रीय मुद्रणालय, राजनांदगांव से मुद्रित तथा प्रकाशित—2001.